भूमिका

मिट्टीके सामान तैयार करनेका व्यवसाय इस देशमें बहुत प्राचीनकालसे होता चला आया है पर हिन्दीमें इस विषयपर किसी ग्रंथके देखने का अवसर अभी तक मुझे नही मिला है। सम्भवतः इस विषयकी कोई पुस्तक हिन्दी में है ही नहीं। कुछ दिन हुये मेरे मित्र डा० सत्यप्रकाश जी ने इस विषयपर, एक छोटी पुस्तक लिखनेको मुझसे कहा। यद्यपि इस विषयपर पुस्तक लिखनेकी मुझमें कोई विशेष योग्यता नही है पर ऐसी पुस्तकका अभाव देखकर मैंने इसमें हाथ लगाया और उसके फल-स्वरूप यह छोटी पुस्तक पाठकोंके सामने है। मुझे पूरी आशा है कि मुझसे अधिक योग्य व्यक्ति इस कामको लेकर इस विषय पर अधिक उपयोगी पुस्तक लिखकर हिन्दीके भण्डारको बढ़ावेंगे।

इस पुस्तकको मैंने यथासम्भव सरलसे सरल भाषा में लिखनेकी चेष्टाकी है। मेरे विचारमें वैज्ञानिक पुस्तकों-की भाषा सरलसे सरल होनी चाहिये ताकि उनके समझ-नेमें विशेष कठिनाइयाँ न हों। कहाँ तक मुझे इस चेष्टामें सफलता मिली है इसका निर्णय पाठक ही कर सकते हैं।

इस पुस्तकके लिखनेमें मुझे श्रीयुत् हिरेन्द्रनाथ बोस, एम० एस-सी०, असिस्टेंट प्रोफेसर आफ़ इण्डस्ट्रियल कैमिस्ट्री, हिन्दू युनिवर्सिटी बनारसकी अंग्रेजी पुस्तक "इण्ट्रोडक्शन टु सिरेमिक इण्डस्ट्रिज़" से बहुत सहायता मिली है। चित्र तो सब उस पुस्तकसे ही लिये गये हैं। प्रोफेसर बोस ने कृपाकर इसके लिये मुझे आज्ञा दे दी है, उसके लिये मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूं। इलाहाबाद युनिवर्सिटी कैमिस्ट्री डिपार्टमेंटके डा० सत्यप्रकाश जी डी० एस-सी० को भी अनेक धन्यवाद है क्योंकि आपके प्रोत्साहनसे ही यह पुस्तक लिखी गयी है। प्रूफ़ देखनेका काम भी आपके ही द्वारा हुआ है। प्रयागकी विज्ञान परिषद् ने इस पुस्तकको प्रकाशित किया है। इससे मैं बहुत आभारी हूँ।

फूलदेव सहाय वर्मा

बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी।

विषय-सूची

पहला अध्याय

इतिहास

बर्तन बनानेमे मिट्टीका उपयोग कबसे शुरू हुआ इसका ठीक-ठीक पता नही लगता। वैदिक मंत्रोंमे मिट्टीके बर्तनोंका ज़िक्र है पर मनुस्मृतिमे जो ईसाके जन्मके दो-तीन सौ वर्ष पूर्वकी लिखी गई समझी जाती है यह स्पष्ट रूपसे वर्णित है कि अशुद्ध हो जानेपर धातुओं वा मिट्टीके बर्तनोंको कैसे शुद्ध किया जा सकता है। हालमे सिन्ध घाटीके महेञ्जोदारो और हरप्पामे जो खोदाई हुई है उसमे उच्चकोटिके अनेक रङ्गोसे रञ्जित और चित्रोसे सुशोभित मिट्टीके बड़े सुन्दर बर्तन पाये गये हैं जिनसे इसमे कोई सन्देह नही रह जाता कि ईसवी सनके २००० से ४००० वर्ष पूर्वमे मिट्टीके सुन्दर बर्तन बनानेकी कला ज्ञात थी। प्राचीन मिश्र-वासी भी अपने कामोंके लिए मिट्टीके बर्तन इस्तेमाल करते थे। ईसवी सदीके २००० से ५००० वर्ष पूर्वकी कब्रोंमें शवोंके रखनेके लिए मिट्टीके पात्र प्रयुक्त होते

थे। मिस्रकी नील नदीकी घाटियोंने प्राय॰ १० हजार वर्ष पुरानी ईंटें मिली हैं। बादमें मिस्रवासियोंने ही बर्तनोंपर लुक फेरनेकी कलाका आविष्कार किया जिसके चिह्न आज भी उस देशके पिरेमिडों और मन्दिरोंपर देखे जाते हैं।

ऐसीरिया और बेबीलोनके प्राचीन अधिवासी भी मिट्टीके बर्तनोंको भिन्न-भिन्न रङ्गोंसे रङ्गना जानते थे। उनकी दीवारें अनेक रङ्गोंसे रङ्गी हुई पायी गई है। प्राचीन ऐसीरियाके खंडहर खोरासाबादमे जो खोदाई हुई है उसमे २१ फुट लम्बी और ५ फुट ऊँची एक दीवार मिली है जो बिलकुल रङ्गी हुई ईंटोंसे बनी है और जिसपर मनुष्य, पशुओं और वृक्षोंके चित्र बने हुए हैं। प्राचीन निनेवा और बेबीलोनमे जो बर्तनके नमूने प्राप्त हुए हैं वे ईसाके ५०० वर्ष पूर्वके बने हुए समझे जाते हैं।

ऐसीरियावासियोंसे फ़ारसवालोंने इस कलाको सीखा और इसमें उन्होंने बहुत कुछ तरक्की की। प्राचीन फ़ारसवालोंके बर्तन अच्छे सामानों और पारदर्शक लुकोंसे बहुत सुन्दरतासे बने होते थे। वे बहुधा पीले रङ्गोंसे रङ्गे होते थे। अरब और मूर लोगोंके द्वारा यह कला स्पेन देश गई और वहाँ इसके निर्माणमें बहुत कुछ उन्नति हुई। स्पेनवालोंके बर्तन फ़ारसवालोंसे

बहुत भिन्न होते थे। उनपर धातुओंकी-सी चमक होती थी। इनके नमूने अब भी स्पेनकी प्राचीन मसजिदोंकी दीवारोंपर देखे जाते हैं। मूरलोगोंसे ही इटलीवालों-ने इस कलाको सीखा।

१५ वीं सदीमे इटली-निवासी एक चतुर व्यक्ति लुकाडेलारोबियाने एक नये प्रकारके मिट्टी के बर्तन बनानेमे सफलता प्राप्त की। ये बर्तन बहुत उच्च कोटिके लुकसे रञ्जित होते थे। ऐसे बर्तनोको 'मेजोलिका' कहते थे। यह मेजोलिका शब्द स्पेनके एक टापू 'मेजारिका' से बना है। इटलीसे मेजोलिका-निर्माणका ज्ञान अन्य यूरोपीय देशोंमे फैला।

इङ्गलैण्डमें ऐसे बर्तनोका निर्माण कबसे शुरू हुआ इसका ठीक-ठीक पता नही लगता। पर ऐसा मालूम होता है कि १७ वीं सदीमे इसका व्यवसाय बहुत कुछ उन्नत था। आज इङ्गलैण्डका स्टैफोर्डशायर नगर इस व्यवसायका प्रमुख केन्द्र है। मिट्टीके बर्तनोके निर्माणके लिए दो चीज़े आवश्यक हैं। एक मिट्टी और दूसरी जलावन। ये दोनो ही चीज़ें संसारके अनेक भागो-मे प्रचुरतासे पाई जाती है। अतः इस व्यवसायके सञ्चालक कुम्हार प्रत्येक देश और स्थलमे पाये जाते थे और अपना व्यवसाय चलाते थे पर जबसे पत्थरके कोयलेका व्यवहार ईंधनके रूपमे शुरू हुआ तबसे

इसका व्यवसाय प्राय उन्हीं स्थानोंपर केन्द्रीभूत होने लगा जहाँ कोयला और उत्कृष्ट कोटिकी मिट्टी प्राप्त हो सकती थी।

अँग्रेज़ी पुस्तकोंमें जिन कुम्हारोंका ज़िक्र आता है उनमें सबसे पहले नाम टॉमस और राल्फ टॉफ़्टके हैं जिनके नाम उनके बर्तनोंपर पाये गए हैं। १६६० से १६८० ई० के बीचमें इन लोगोंने अपने बर्तन बनाये थे। टॉफ़्टके नामसे ही कुछ मिट्टीके बर्तनोंको 'टॉफ़्ट बर्तन' कहते हैं। इनके बाद १६९० ई० में डेन्स-वार्सा दो कुम्हार भाइयोंने जिनके नाम 'एलर्स' थे इङ्गलैंडके ब्राडवेल स्थानमें आकर बर्तन बनानेका व्यवसाय खोला और इनका व्यवसाय चमक उठा। ये लाल मिट्टीके बर्तन बनाते थे और उन्हें धातुओंकी छापसे सुसज्जित करते थे। इन लोगोंने ही मिट्टीके बर्तन बनानेमें पहले पहल कुछ उपकरणोंका जैसे कैल्शियम सल्फेटके ढाँचे और धातुओंके ठप्पेका प्रयोग किया था।

१८ वीं सदीमें इस व्यवसायकी बड़ी उन्नति हुई। १७२० ई० में सफेद मिट्टीका प्रवेश हुआ और फ्लिंट-के प्रयोगसे सफ़ेद बर्तन बनने लगे। १७५० ई० में राल्फ डैनियल द्वारा पेरिसके प्लास्टरके ढाँचे तैयार हुए जिनमें भिन्न-भिन्न प्रकारके बर्तन सरलतासे ढाले जा

सकते हैं। इसी वर्ष इनौक बूथ नामक व्यक्तिने मिट्टीके बर्तनोंको द्रव लुकमे डुबाकर फिर आगमे पकाया। इस व्यवसायका एक दूसरा प्रमुख व्यक्ति टॉमस वील्डन हुआ जिसके साझेदार वेजवुड थे। १७४० से १७८० ई० तकको 'वील्डन काल' कहते हैं। वेजवुडने पीछे स्वतन्त्र रूपसे एक कारखाना खोला जिसमे कुछ पीलापन लिये हुए सफ़ेद बर्तनका निर्माण होता था। इनका प्रचार बहुत अधिक बढ़ा। पीछे इन्होने १७६९ ई० मे इट्रुरीयामे एक कारखाना खोला जो अबतक इनके वंशजोंके हाथमे चल रहा है। इसके बाद यूरोप और अमेरिकामे अनेक कारखाने खुले।

भारतमे मिट्टीके बर्तनोका निर्माण

इस देशमे जो मिट्टीके बर्तन बनाये गये है वे तीन विभागोंमे विभक्त किये जा सकते है। एक ऐतिहासिक कालके पूर्वके बर्तन, दूसरे बौद्ध और हिन्दू कालके बर्तन, तीसरे मुसलमानी कालके बर्तन।

ऐतिहासिक कालके पूर्वके बर्तन महेंजोदारो और हरप्पाकी खोदाईमे पाये गये है जिनका उल्लेख पहले हो चुका है। ये कैसे बनाये गये थे इसका कुछ ज्ञान हमें नहीं है। बौद्ध और हिन्दू कालके बर्तन सारनाथ और अन्य वैदिक खंडहरोंमेकी खोदाईमे पाये गये हैं।

चूँकि हिन्दुओमे मिट्टीके वर्तन कुछ समयके प्रयोगके बाद अशुद्ध समझे जाते है और तब वे फेक दिये जाते है इससे उस कालमें ऐसे वर्तन बहुत कम बनते थे जिनपर नक्काशी रहती थी। पीछे अनाज और अचारोके रखनेके लिए मर्तबान और अन्य सुन्दर चित्रित वर्तन बनने लगे। पर ऐसे वर्तनोका प्रयोग बहुत परिमित था। ऐसे वर्तन दक्खिन भारत और पेशावरके खंडहरोकी खोदाईमे पाये गये है।

मुसलमानी कालमे मसजिदों और कब्रोके बनानेके लिए रंगीन और चमकीले टाइल बनने लगे।

आजकल अधिकाश कुम्हार हिन्दू है पर दिल्ली और सिन्धके हैदराबादके आसपास कुछ काशीगार व कुजागार है जो मुसलमान है और मिट्टीके बर्तनोपर बहुत कुछ केवल नक्काशीका काम करते है। जब चित्रित टाइलोंकी मॉग कम हो गई तब ये लोग वर्तनोंपर चमक देने और चित्र बनानेमें लगे और ऐसे वर्तनोंका व्यवसाय अब भी थोडा बहुत चलता है।

सफेद मिट्टीके वर्तनोंका व्यवसाय भारतमें १८६० ई०से शुरु होता है जब राजमहल पहाड़ियोमे सफ़ेद मिट्टीका, जिसे चीनी मिट्टी कहते हैं, पता लगा। उस समय भागलपुर जिलेके कौलगांव स्थानमें एक कारखाना खुला था जिसमे उच्चकोटिके वर्तन तैयार होते थे।

इसके बाद दूसरा कारखाना कलकत्तेमें इस बीसवीं सदीके आरंभमें खुला। इस कारखानेके संस्थापक और सञ्चालक श्री देव थे जिन्होंने इस विषयकी शिक्षा जापान, इङ्गलैण्ड और अमेरिकामे पाई थी। श्री देव-का अब इस कारखानेसे कोई सम्बन्ध नही है पर यह कारखाना सफलतापूर्वक चल रहा है और इसमे उत्कृष्ट कोटिके बर्तन और अन्य सामान तैयार होते है। इसके बाद ग्वालियरमे और फिर दिल्लीमे मिट्टीके बर्तन और अन्य चीज़ें बनानेके कारखाने खुले और वे चल रहे हैं। लाहौरका फोर्मैन क्रिश्चियन कालेज पहली शिक्षा-सम्बन्धी संस्था है जिसने इस विषयकी शिक्षा देनेका प्रबन्ध किया। इसके पश्चात् हिन्दू विश्वविद्यालयने 'सिरेमिक' विभाग खोला जिसमे इस सम्बन्धकी शिक्षा दी जा रही है। इस शिक्षाके साथ-साथ यहाँ अर्द्ध-व्यापारिक पैमानेपर बर्तन, खिलौने, मूर्त्तियाँ, बिजलीका सामान, और स्वास्थ्य-सम्बन्धी चीजें भी तैयार होती हैं। यहाँ कुम्हारके बालकोंको भी उत्कृष्ट कोटिके बर्तन बनाने-की शिक्षा दी जाती है और कुछ बालकोंको इसके लिए संयुक्त-प्रान्तकी सरकारसे छात्र-वृत्ति भी मिलती है।

आजकल मिट्टीके बर्तन और अन्य सामान पर्याप्त मात्रामे बाहरसे यहाँ आते है। इनके प्रयोग दिन प्रतिदिन बढ़ रहे हैं। १९२५ ई० में प्रायः दो करोड़

रुपयेके ऐसे सामान यहाँ आए। अतः ऐसे सामानोंके निर्माणका यहाँ पर्याप्त क्षेत्र है । यह आवश्यक है कि ऐसे कारखाने शीघ्र ही इस देशमे खुलें ताकि देशका धन वाहर जानेसे बच जाय।

दूसरा अध्याय

वर्गीकरण

सिरेमिक क्या है—मिट्टीके सामान तैयार करनेसे सम्बन्ध रखनेवाले उद्योग-धन्धोंको 'सिरेमिक' उद्योग-धन्धे कहते है। यह 'सिरेमिक' शब्द यूनानी शब्द 'किरेमोस' से निकला है। किरेमोसका साधारण अर्थ कुम्हार, कुम्हारकी मिट्टी व मिट्टीका बर्तन है। ऐसा समझा जाता है कि यह यूनानी किरेमोस शब्द किसी संस्कृत धातुसे निकला है जिसका अर्थ जलाना है और यूनानियों-के द्वारा पहले पहल पकाये हुए पदार्थोंके लिए प्रयुक्त होता था। मिट्टीके बर्तन बनानेकी कलाको एक समय 'सिरेमिक' कहते थे। पर आज इस शब्दमे दो विचार अन्तर्हित है। सिरेमिक शब्दसे यह ज्ञात होता है कि इनके तैयार करनेमे उच्च तापक्रमका प्रयोग हुआ है। दूसरे सिरेमिक उन सामानोंको कहते है जो बिलकुल नही तो प्रधानतः मिट्टी सदृश कच्चे पदार्थोंसे बने है। सिरेमिक उद्योग-धन्धेके अन्तर्गत निम्नलिखित पदार्थोंके निर्माण आते हैं:—

गृह-निर्माणके सामान— नाना प्रकारकी ईंटें, पीनेके पानीके नल, गन्दे पानीके नल, खपड़े, नरिये और दीवार व गचपर लगानेके टाइल।

अगालनीय सामान— आग-ईंटें, सिलिका-ईंटे, क्रोमाइट-ईंटे, इत्यादि।

वर्तन— प्याले, तश्तरियाँ, प्लेट, पकानेके बर्तन, नाना चित्रोंसे चित्रित सौंदर्यके बर्तन और मूर्त्तियाँ, स्वास्थ्य-सम्बन्धी वर्तन, पत्थरके बर्तन, रसायनशालामें प्रयुक्त होनेवाले पोरसलिन और पत्थरके सामान।

काँच— बोतल, शीशियाँ, काँचके घरेलू बर्तन, खिडकीके काँच, बिजलीमें प्रयुक्त होनेवाले काँच, प्रकाश-सम्बन्धी काँच, स्फटिक काँच, लुक़, इनेमल, कृत्रिम पत्थर इत्यादि।

धातुओंके इनेमल वर्तन— घरेलू बर्तन, रासायनिक वर्तन और विज्ञापनके पट्ट इत्यादि।

चूना, सीमेंट और प्लास्टर— चूना, पोर्टलैण्ड सीमेंट, दाँतके सीमेंट, मैगनीशिया सीमेंट, जला हुआ जिप्सम इत्यादि।

पृथग्न्यासक— बिजली और तापके पृथग्न्यासक।

उपर्युक्त सामानोंको तीन प्रधान श्रेणियोंमें विभक्त कर सकते हैं।

१—एक वे सामान जो गरम करनेपर द्रवित हो जाते हैं और तब सान्द्र द्रव रूपमे विभिन्न आकारोंके सामानोंमे ढाले जा सकते हैं। ठंढा करनेसे इनमे बल आता है। ये काँचके सामान हैं।

२—दूसरे वे पदार्थ जो चूर्ण रूपमें रहते हैं। जल देनेसे इनमें जुड़नेकी शक्ति आती है। ये चूना, सीमेंट और प्लास्टर है।

३—तीसरे वे पदार्थ जो पानी देनेसे ऐसी नम्र अवस्थामें आ जाते है कि उन्हें आवश्यक आकार देकर उच्च तापक्रमपर गरम कर कुछ अंशमे द्रवित होनेसे उनमें बल आ जाता है। ये प्रधानतः मिट्टीके बर्तन, गृह-निर्माणके सामान, अगालनीय चीज़ें, पृथग्न्यासक इत्यादि है। इस ग्रन्थमे इन तीसरे प्रकारके पदार्थोंके निर्माण ही वर्णन होगा।

मिट्टीके बर्तनोंका वर्गीकरण

मिट्टीके बर्तनों और अन्य सामानोंका लोगोंने भिन्न-भिन्न प्रकारसे वर्गीकरण किया है। किसीने ऐसे सामानोंको ऐसे दो विभागोंमे विभक्त किया है जो लोहेसे खुरचे जा सकें और जो लोहेसे न खुरचे जा सके। लोहेसे न खुरचनेवाले सामानोको फिर पारदर्शक और अपारदर्शक दो भागोंमें विभक्त किया है। एक दूसरे

व्यक्तिने ऐसे सामानोंको लुकवाले और बिना लुकवाले विभागोंमें विभक्त किया है। एक तीसरेने ऐसे सामानोंको प्रवेश्य और अप्रवेश्य सामानोंमे विभक्त किया है। मिट्टीके सामान आजकल निम्नलिखित पाँच भागोंमे विभक्त किये जाते है :—

(१) अगालनीय सामान— ये वे सामान हैं जो शीघ्रतासे गलते नही है। ये साधारणतया १४००° श० से ऊपर तापक्रमपर पकाये जाते हैं। या तो ये मिट्टीके बने होते है जैसे आग-ईंटे या ग्रेफाइटके जैसे ग्रेफाइट घरिया। इनपर लुक नहीं फेरा जाता।

(२) पोरसीलेन— ये सफेद और अप्रवेश्य होते हैं। इनपर सफ़ेद लुक़ फेरा रहता है। पर्याप्त पतले होनेपर ये अल्प पारदर्शक होते हैं।

(३) पत्थरके सामान— ये अपारदर्शक और अप्रवेश्य, सफ़ेद व रगीन होते है। इनपर पोरसीलेन-के ऐसा लुक फेरा हुआ होता है या ये केवल नमकके लुकसे रञ्जित होते है। कभी-कभी ये विना लुक फेरे हुए भी होते हैं।

(४) मिट्टीके सामान— ये सफ़ेद या रंगीन मिट्टीके बने होते है। इनपर बराबर लुक़ फेरा हुआ होता है।

(५) टेराकोटाके सामान— ये रंगीन मिट्टीके बने होते है। इनपर लुक़ फेरा हुआ नहीं होता। ऊपर-वाले सामानोंकी अपेक्षा बहुत निम्न तापक्रमपर ये पकाये होते हैं। साधारण ईटें, खपड़े, गमले इत्यादि इनके उदाहरण है।

तृतीय अध्याय

मिट्टीका रूप

मिट्टी कैसे बनती है

चट्टानोके टूट-टूटकर गिरनेसे मिट्टियाँ बनती है। कुछ मिट्टियोमे अलुमिनियम सिलिकेटकी मात्रा इतनी होती है कि पानीके साथ वे जल्दी ही नम्र वा अर्धनम्र ढेर बन जाती है। पर कुछ मिट्टियां दबाव और तापके कारण इतनी कठोर हो जाती है कि नम्र बनानेके लिये उन्हे बहुत अधिक पीसना पड़ता है ताकि जल उनमे प्रविष्ट कर सके। मिट्टीका अत्यावश्यक अवयव अलुमिनियमके सिलिकेट है। प्रकृतिमे अनेक सिलिकेट पाये जाते है। ये सिलिकेट अलुमिनियम, लोह, कैलशियम, मैगनीशियम और अलकली धातुओं, सोडियम और पोटेशियमके होते हैं। इन्ही सिलिकेटोंसे अनेक प्रकारके चट्टान बने है। अधिकांश सिलिकेट जलमे प्रायः अविलेय होते हैं। ये साधारण तापक्रमपर केवल हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल नामक अम्लमे ही विलेय होते है। केवल अलकली धातुओंके सिलिकेट जलमे

विलेय होते हैं। भिन्न-भिन्न सिलिकेटोंके संयोगसे कुछ ऐसे नए सिलिकेट बनते हैं जो अनेक गुणोंमें पहलेके सिलिकेटोंसे विभिन्न होते हैं। मिट्टीके सामानोंके बनानेका उद्देश्य यही है कि ऐसे सिलिकेट बनें जो जल, अम्लों और लवणोंमें घुले नही।

चट्टानोमे क्या होता है?

पत्थरोंके चट्टान सिलिकेटोंके बने होते हैं। ये सिलिकेट भिन्न-भिन्न धातुओंके सिलिकेटोंके मिश्रग होते है। इन चट्टानोमे विभिन्न धातुओंके सिलिकेटोंकी मात्रा भिन्न-भिन्न होती है। ग्रेनाइट चट्टान वहुत अधिक पाया जाता है। इसका औसत संगठन आगेके पृष्ठपर दिया गया है।

साधारण पत्थरोके चट्टान आग्नेयचट्टान ग्रेनाइट और वैसाल्टके वने होते है। इनमें ग्रेनाइटका प्राय· ६५ भाग और वैसाल्टका प्राय ३५ भाग होता है। इनके संगठन भी आगे दिये जाते हैं।

		औसत ग्रेनाइट	औसत बैसाल्ट	आग्नेयचट्टान ग्रेनाइट ६५ बैसाल्ट ३५
		प्रतिशत	प्रतिशत	प्रतिशत
सिलिका	(शै ओ$_2$)	७०·४७	४९·६५	६३·१८
अलुमिना	(स्फ$_2$ओ$_3$)	१४·७०	१६·१३	१५·३५
लोहिक ओषिद	(लो$_2$ ओ$_3$)	१·६३	५·४७	२·९७
लोहस ओषिद	(लो ओ)	१·६८	६·४५	३·४५
मैगनीशिया	(म ओ)	०·९८	६·१४	२·७९
चूना	(ख ओ)	२·१७	९·०७	४·५८
सोडा	(सै$_2$ ओ)	३·३१	३·२४	३·२८
पोटाश	(पां$_2$ ओ)	४·१०	१·६६	३·२४
टाइटेनिया	(टि ओ$_2$)	०·३९	१·४१	—
स्फुरिकौषिद	(स्फु$_2$ ओ$_5$)	०·२४	०·४९	—
		९९·८७	९९·७०	

चट्टाने किस प्रकार टूटती है ?

चट्टानोके टूटनेसे मिट्टियाँ बनती है। इन चट्टानों-

के तोड़नेवाले जल, वरफ, पवन (कर्बन द्विओषिद और ओषजन), वायुके तापक्रम, पौधे और पशु होते हैं। इनमे कुछ पदार्थों द्वारा इन चट्टानोमे रासायनिक क्रियाएँ होती हैं। इन रासायनिक क्रियाओं द्वारा ही मिट्टियोमे नम्रता आती और धीरे-धीरे वढ़ती है। नम्रताके होनेसे ही इसे मिट्टी कहते है। उपर्युक्त पदार्थो द्वारा चट्टानोमे ओषदीकरण, उदकरण या जल-संयोजन, जल-वियोजन, विलयन और अवकरण होते है। कुछ चट्टाने शीघ्रतासे टूटकर मिट्टी वन जाती है और कुछ वहुत देरसे, सैकडो और हजारो वर्षोंमे टूटकर मिट्टी वनती है। स्फटिक ऐसी चट्टान है जो वहुत देरसे टूटकर मिट्टी वनती है।

मिट्टीका वर्गीकरण

वैज्ञानिकोंने मिट्टीको दो श्रेणियोमे विभक्त किया है। एक प्राथमिक मिट्टी जो जहाँ वनती है उसी स्थान-पर रहती है। यह मिट्टी किसी एक चट्टान वा चट्टानो-के समूहके विच्छेदनसे वनी होती है। दूसरी तृतीयिक मिट्टी जो पानी, पवन वा वरफमे वहाकर दूसरे स्थान-मे लाई गई है। यह मिट्टी अनेक प्रकारकी चट्टानोके विदीर्ण होनेसे वनी होती है। इस मिट्टीके वडे-वडे

टुकड़े वा पत्थर बहाकर ले जाये जानेके कारण बहुत-कुछ छन जाते हैं। अतः यह मिट्टी उत्कृष्ट कोटिकी होती है। समरूप सामानोंके बनानेके लिए यह मिट्टी अधिक उपयुक्त होती है।

गुणके कारण मिट्टियाँ फिर अनेक प्रकारकी होती है। जो मिट्टी बर्तन बनानेमें काम आती है उसे केओलीन और चीनी मिट्टी कहते हैं। चीनी मिट्टीका प्रयोग पहले पहल चीन देशमें हुआ। इसीसे इसका नाम चीनी मिट्टी पड़ा और इससे बने बर्तन चीनी मिट्टी-के बर्तनके नामसे प्रसिद्ध है। जो मिट्टी जलानेपर जल्दी नहीं पिघलती उसे अग्निजित-मिट्टी (फ़ायरक्ले) कहते है। इस मिट्टीकी बनी ईंट चूल्हों वा भट्टाके बनानेमें प्रयुक्त होती है। चीनी मिट्टीसे मिलती-जुलती एक मिट्टी होती है जो तम्बाकूकी नलियोंके बनानेमें काम आती है। इसे नली-मिट्टी (पाइप-क्ले) कहते है। बर्तन बनानेमें काम आनेवालीको बर्तन-मिट्टी (पौटरी-क्ले) कहते हैं।

मिट्टीके गुण

केओलीन और चीनी मिट्टी सफ़ेद, कुछ पीला-पन लिये हुए सफ़ेद या हल्के भूरे रङ्गकी होती हैं। कुछ उद्भिज पदार्थोंके कारण इनमें रंग होता है पर

आगमे पकानेपर ये प्राय· सफ़ेद हो जाती हैं। टुरम-लीनके कारण चीनी मिट्टीका रंग कभी-कभी नीली आभा लिये होता है। लोहेके कारण इसमे कुछ पीलापन होता है। पकानेपर यह रंग अधिक स्पष्ट हो जाता है।

केओलीन मुलायम होता है और छूनेसे साबुन-सा मालूम होता है। केओलीन और चीनी मिट्टी दोनोंमे ही छोटे-छोटे बारीक कण जुटे हुए होते है और रगडनेसे ये भुरभुरे हो गिर पडते हैं। आँखोसे देखनेमे इनमें कोई बनावट नहीं दीख पडती पर प्रबल सूक्ष्मदर्शक द्वारा देखनेसे ये छोटे-छोटे छिलको वा पर्तोंके बने मालूम होते है। मिट्टियोमें नम्रता होती है। बहुत सूक्ष्म कणों और उद्भिज पदार्थोंके कारण ही इनमें नम्रता होती है। साधारणत इनके दाने २०० मेश वा छेद-की चलनीमेसे निकल जाते हैं। ये दाने पानीसे भी बहाये जा सकते है। केओलीन वा चीनी मिट्टीको प्राय· ११०° श० पर गरम करनेसे इसका १०-१२ प्रतिशत जल निकल जाता है। प्राय ८००° श० तक गरम करनेसे इसका १३ प्रतिशत जल और निकल जाता है। ११००° श० पर पकानेसे चीनी मिट्टी बिल-कुल सफेद और बहुत कठोर हो जाती है। तब जलको

यह शीघ्रतासे शोषित नहीं करती। इसपर अम्लोंकी सब क्रियाएँ भी नहीं होती।

केओलीनमे रंगों और विलेय लवणोके शोषण और उन्हे पकड़ रखनेका विशेष गुण होता है। चीनी मिट्टी-पर हल्के हाइड्रोक्लोरिक अम्लका कोई असर नही होता पर गन्धकाम्लके साथ बहुत समयतक उबालनेसे यह आक्रान्त हो विच्छेदित हो जाती है। गरम करनेपर जलके निकल जानेसे यह विच्छेदित हो जाती है। इसके विच्छेदनसे मुक्त सिलिका, मुक्त अलुमिना और जल बनते हैं।

शुद्ध चीनी मिट्टी अगालनीय होती है। इसके कोमल होनेका तापक्रम प्रायः १६६०° श० है। यदि इस मिट्टीमें कुछ चूना और रेत मिला दिया जाय तो इसका गालनाङ्क कुछ निम्न हो जाता है।

मिट्टीके प्रयोग

केओलीन कौर चीनी मिट्टी बरतन बनानेमें काम आती है। इसकी मूर्त्तियाँ भी बनती हैं। भिन्न-भिन्न पशु—हाथी, घोडे, सिंह, हिरन, बाघ—इत्यादि इसके बनकर खिलौनेके रूपमे बिकते है। और भी अनेक प्रकारके खिलौने इसके बनते है। बिजलीके सामान भी विशेषतः पृथग्न्यासक (इन्सुलेटर) इसके बनते है।

इनके अतिरिक्त वस्त्र, कागज, फिटकिरी और अल्ट्रा-मैरीन नामक रंगके बनानेमे भी यह प्रयुक्त होती है। इसकी ईंटे, जलके नल, खपडे इत्यादि अनेक उपयोगी चीजे बनती हैं। चीनी मिट्टीके धोनेसे जो बारीक अभ्रक निकलता है वह मोटे कागज और कागज़के तखतोकी तौल बढानेमे प्रयुक्त होता है। मिट्टी औषधोमे भी प्रयुक्त होती है।

मिट्टीके अपद्रव्य

केओलीनमे जलसयोजित सिलिका, मुक्त सिलिका और सिलिकेट अपद्रव्यके रूपमे रहते है। जल-संयोजित सिलिका कलार्द्र अवस्थामे रहता है। इसमें लचक नहीं होती। अत इसके होनेसे मिट्टीकी नम्रता न्यून रहती है। मुक्त सिलिकाके कण बडे-बडे होते है। अत मुक्त सिलिकाके कारण मिट्टी अच्छी नहीं होती। अच्छी मिट्टीमे मुक्त सिलिकाका न होना आवश्यक है।

शुद्ध रेत प्राय सिलिका होता है पर किसी-किसी रेतमे केवल ८० प्रतिशत सिलिका ही रहता है। यदि शुद्ध बालू न प्राप्त हो सके तो उसके स्थानमे फेल्सपार-का प्रयोग हो सकता है। मिट्टीमे सिलिका डालनेसे इसका गालनाङ्क निम्न हो जाता है क्योंकि यह

सिलिका लोहे या अन्य धातुओंके ऑक्साइडके साथ मिलकर द्रावक (फ्लक्स) का कार्य करता है। नम्र मिट्टीमे सिलिकाके कारण इसकी नम्रता कम हो जाती है। इसके सिकुड़नेकी शक्ति और उसके टेढ़े-मेढ़े होने और फटनेकी शक्ति भी कम हो जाती है। पर इससे मिट्टीकी सान्द्रता (छेदीलापन) बढ़ जाती है और ताप-क्रमके अकस्मात् परिवर्तनके सहनकी शक्ति बढ़ जाती है।

मिट्टीमें क्षारता

मिट्टीमे क्षारता या तो विलेय या अविलेय लवणके रूपमे रहती है। क्षारता रहनेसे मिट्टीकी गलनीयता बढ जाती है। सुखाने वा पकानेपर क्षारतायुक्त मिट्टीके बर्तनोपर कुछ मैल जम जाता है। मिट्टीकी नम्रता भी इससे कम हो जाती है। मिट्टीमे जो क्षारता रहती है वह साधारणतया अलुमिनियम सिलिकेट (स्फट शैलेत) की होती है। इसे फेल्सपार, अभ्रक और कौर्निश पत्थरके नामसे भी पुकारते है। अगालनीय मिट्टीमे थोड़ी क्षारताके होनेसे इसके कणोमे बँधे रहने-की शक्ति बढ़ जाती है। इससे ऐसी मिट्टीके सामानों-मे अधिक मज़बूती आ जाती है। बहुत उच्च तापक्रमपर पकानेसे कुछ क्षार वाष्पीभूत हो निकल जाता है।

इससे इनकी बनी चीजें अधिक अगालनीय होती है। मिट्टीमे जो अभ्रक रहता है वह मास्कोवाइट वा पोटाश अभ्रकके रूपमे रहता है। यह पोटाश और अलुमिनियमका सिलिकेट होता है। इसका संगठन पो$_2$ओ, स्फ$_2$ओ$_3$, ६ शैओ$_2$ दिया जा सकता है। इसका गालनाङ्क १३९५$^{\circ}$ श० होता है। १२००$^{\circ}$ श० के नीचे यह शायद ही कोमल होता हुआ पाया जाता है। पर यदि यह बहुत बारीक पिसा हुआ हो तो इससे निम्न तापक्रमपर भी कोमल हो सकता है।

मिट्टीमे कार्बनिक पदार्थ

मिट्टीमे ५ प्रतिसैकडासे अधिक कार्बनिक पदार्थ नहीं होना चाहिए। यदि है तो ऐसी मिट्टी बरतन बनानेके कामकी नहीं रहती। कार्बनिक पदार्थोंके कारण पकानेके पूर्व और पश्चात्के रंगमे बहुत फर्क पड जाता है। मिट्टीकी नम्रता इससे बढ जाती है और पकानेके बाद मिट्टीमे सान्द्रता भी बढ जाती है। पकनेपर ऐसे बरतनोंमे सिकुडन अधिक होती है। ऐसी मिट्टीके पकानेमे जलावन कम लगता है। ऐसी मिट्टी-का सबसे बुरा परिणाम यह होता है कि लोहेके ऑक्सा-इडोंके अवकरणसे गालनीय धातुमैल बननेका भय रहता है। अत ऐसी मिट्टीको बड़ी सावधानीसे पकानेकी आवश्यकता पडती है।

चूना और मैगनीशिया

चूना और मैगनीशिया भी मिट्टीमे रहते हैं। यदि चूनेकी मात्रा ३५ प्रतिशत है तो मिट्टीका गालनाङ्क १२३०° श० हो जाता है पर अन्य पदार्थोंकी उपस्थितिमे गालनाङ्कका गिरना रोका जा सकता है। मैगनीशियाके कारण भी मिट्टीका गालनाङ्क कम हो जाता है पर इसकी अधिक मात्रासे मिट्टीकी अगालनीयता बढ़ जाती है। मैगनीशियाके कारण मिट्टीकी सिकुडन बढ़ जाती है पर ऐसी मिट्टीके बर्तन पकानेपर अपने आकारको बहुत अधिकतासे कायम रखते है। चूनेके कारण पकानेपर मिट्टीके रङ्गमे बहुत-कुछ परिवर्तन होता है। जिस मिट्टीमे पर्याप्त लोहा रहता है वह पकानेपर लाल रङ्गकी हो जाती है। चूनेके होनेसे ऐसी मिट्टी पकानेपर बादामी रङ्गकी हो जाती है। अधिक तापक्रमपर पकानेसे यह हरे रंगकी हो जाती है। जब चूना और रेतके साथ मिलकर लोहा लौह-चूना-सिलिकेटमे परिणत हो जाता है तब लोहेका हरा रंग साधारणतया दूर हो जाता है। इसीके बननेसे सामान्य कॉचमे हरा रङ्ग होता है।

मिट्टीमे लोहेके यौगिक

हर मिट्टीमें लोहेके यौगिक रहते हैं। कितने ही

यत्नसे मिट्टीको क्यो न शुद्ध किया जाय उसके सब लोहे दूर नही किये जा सकते। साधारणतया मिट्टीमे लोहेके दो ओपिद, लोहस ओषिद और लोहिक ओपिद, कर्बनेत और गन्धिद रहते हैं। विश्लेपणमे लोहेके अश-को लो$_2$ओ$_3$ के रूपमे ही साधारणतया प्रदर्शित करते है।

लोहेके ओपिद (लो ओ) के कारण मिट्टीका रंग लाल होता है पर सफेद मिट्टीमे अलगसे इस ओपिदके डालनेसे पकानेपर वैसा गाढा और चमकीला रंग इसमे नही आता जैसा प्राकृतिक मिट्टीमे होता है। लोहस ओपिद मिट्टीमे नही रहता पर मिट्टीके पकानेपर कार्बनके कारण यह बन जाता है। लोहेके कर्बनेत और गन्धिद दोनो ७००° श० के ऊपर गरम करनेसे लोहस ओपिदमे परिणत हो जाते है और उनसे गैसे निकलती है। इन गैसोका निकलना बरतनोके लिए अच्छा नही है। यदि भट्टीकी वायु पर्याप्त ओपदीकारक हो तो लोहस ओपिद लोहिक ओपिदमे परिणत हो जाता है। लोहिक ओपिद अगालनीय होता है और इससे बर्तनोको कोई हानि नही होती। अत यह आवश्यक है कि लोहेके कर्बनेत वा गन्धिदके होनेपर ७००° से ९००° श० के बीच भट्टीकी वायु प्रबल ओपदीकारक होनी चाहिए और यह वायु यथा-

सम्भव कर्बन द्विओषिद और गन्धक द्विओषिदसे मुक्त होनी चाहिए। अवकरण वायुमे थोडी मात्रामे लोहस ओपिदके रहनेसे हल्का नीला रंग आता है। पर जैसे-जैसे इसकी मात्रा बढती है वैसे-वैसे रंग गहरा होता जाता है और अन्तमे काला हो जाता है और धात्वीय द्युति आ जाती है।

टाइटेनियम भी ओपिद टिओ$_2$ वा टाइटेनाइट (ख टिओ$_3$) के रूपमे मिट्टीमें रहता है। यह द्रावकका कार्य करता है। जिस मिट्टीको अति उच्च तापक्रमतक गरम करना है उसमे इसकी मात्रा २ प्रतिशतसे अधिक नही रहनी चाहिए। १० प्रतिशतके रहनेसे मिट्टीका गालनाङ्क १००° श० घट जाता है। साधारण विश्लेपणमे टाइटेनियम सिलिका और अलुमिनाके अन्तर्गत ही रहता है क्योकि इसकी मात्रा अलग निकालनेमे विशेप सावधानी और प्रयत्नकी आवश्यकता पड़ती है।

अध्याय ४

कच्चे माल

मिट्टीके सामानोंके तैयार करनेमे अनेक द्रव्योंकी आवश्यकता पड़ती है। इन्हे हम 'कच्चा माल' कहेंगे। ये क्या हैं और कहां मिलते है उनका संक्षिप्त वर्णन यहां होगा।

मिट्टी।

मिट्टीके सामानोंके निर्माणके लिये मिट्टी अत्यावश्यक वस्तु है। मिट्टी हिन्दुस्तानके अनेक भागोंमें पायी जाती है।

जम्मूकी मिट्टी।

काश्मीरके जम्मू प्रान्तमें चीनी मिट्टी (केओलीन) बहुत प्रचुरतासे पायी जाती है। कहीं-कहीं यह सफ़ेद होती है पर अधिकांश स्थलोंकी मिट्टी भूरे वा हल्के पीले रंगकी होती है। कहीं-कहीं यह बिलकुल धुंधले रंगकी भी होती है। यहांकी मिट्टीमे अलुमिनाका अंश अधिक होता है। यहांकी मिट्टी ४ से १२ फुटकी तहमें पायी गयी है। इसकी मात्रा अनेक स्थानोंपर लाखो टनतक पहुँच जाती है।

दिल्लीकी मिट्टी

दिल्लीके निकट कुसुमपुरमे भी मिट्टी मिलती है। यह मिट्टी कही-कहीं कुछ लाल वा पीले रंगकी होती है। जैसे-जैसे यह अन्दर खोदी जाती है वैसे-वैसे यह अधिक शुद्ध पायी जाती है। ६० फुट तक यह मिट्टी यहा खोदी गयी है। जिस मिट्टीमें लोहेका अश कम रहता है वह मिट्टी ग्वालियर पौटरी वर्क्स नामक कारखानेमे बरतन बनानेमे काम आती है। बरतन बनानेके पहले यह मिट्टी शुद्ध कर ली जाती है।

सयुक्त प्रान्तमे नैनीताल, अलमोडा और मिर्जा-पुरमे अच्छी सफेद मिट्टी मिलती है। उडीसामे महानदीके तटपर सफेद मिट्टी मिलती है। वहाके निवासी इस मिट्टीको अपने घरोके सुसज्जित करनेमे प्रयुक्त करते हैं। राजमहल पहाडियोमे भी अच्छी मिट्टी पायी गयी है। यह मिट्टी काफ़ी सफ़ेद होती है। इसमे स्फटिक (क्वार्ट्ज) तथा अन्य अपद्रव्य बहुत कम मिले रहते है। यह भुरभुरी होती है। इससे इसमे नम्रता कम रहती है। बरतनोके बनानेके लिये यह मिट्टी बहुत अच्छी होती है। कई स्थलोंपर यह मिट्टी खोदी गयी है। ई० आई० रेलवेके कौलगज स्टेशनसे प्राय ६ मीलकी दूरीपर गगाके तटपर पत्थर-घट्टा नामक स्थान है जहा पर १८० फुट मोटी

तहकी मिट्टी पायी गयी है। इसके सिवा करनपुरा दोढानी, काठङ्गी, मंगल हाट, समुकिया और कठुरिया, और सराय केला नामक स्थानोमे भी मिट्टी पायी गयी है और वहां से निकाली जाती है।

बंगाल प्रान्तके दार्जलिग और बर्दवान जिलेके रानीगंजमे मिट्टी पायी गयी है। बर्न कम्पनीद्वारा यह काममे आती है। आसामके ब्रह्मकुण्ड और ढोरा-मुख स्थानोमे सफ़ेद स्फटिकके ऊपर सफ़ेद मिट्टीकी मोटी तहे मिलती है। बंबईके कनारा ज़िलेके 'कैसल रौक' मे कुछ मिट्टी मिलती है। रत्नागिरी और बेलगांव जिलोमे भी मिट्टी पायी गयी है। मैसूर और ट्रावनकार ज़िलोमे भी पर्याप्त मिट्टी मिलती है। उसे काममे लानेकी चेष्टाएँ हो रही है।

जमीनके अन्दरसे मिट्टी को बाहर निकालनेके लिये पर्याप्त पानीकी जरूरत पड़ती है। अतः वहांकी ही मिट्टी निकाली जा सकती है जहां पर्याप्त पानी हो। इङ्गलेण्ड और यूरोपके अन्य देशोमे खुली हुई खानो-से मिट्टी निकाली जाती है। अन्य देशोमे विशेषतः हिन्दुस्तानमे एक पतली लम्बी खोदाई ऊपरसे होती है और फिर अन्दर चारो ओर खोदकर मिट्टी निकाली जाती है। इङ्गलैण्डमे साधारणतया ऊपरी तहके १० से २० फुटके नीचे सफ़ेद मिट्टी मिलती है। ऊपरी

तहकी मिट्टीको हटा कर तब सफ़ेद मिट्टीको निकालते हैं। यह मिट्टी जलमें घुला कर निकाली जाती है। उससे फिर निपतन या अधःक्षेपण द्वारा मिट्टी प्राप्त करते है।

सफेद मिट्टीकी चट्टानोपर जलकी प्रवल धारा प्रवाहित की जाती है जिससे मिट्टी और उसके साथ-साथ ककड़ और रेत वह कर निकल आते है। यदि मिट्टीकी चट्टानें सख्त हो तो उन्हे हाथोसे ढीला कर लेते अथवा डायनामाइटसे उडा देते है। मिट्टी मिली हुई जलको यह धारा खानोंके पेदेमे स्थित गढोंमे वह कर इकट्ठी होती है। इन गढोंको 'रेत गड्ढा' (सैण्ड-पिट) कहते हैं।

यहाँ ककड और रेतके बड़े वडे टुकडे तहमे वठ जाते है। स्फटिक, फेल्सपार, टुरमलीन और ग्रेनाइटके अल्प-विच्छेदित टुकड़े भी नीचे वैठ जाते है। इससे मिट्टी वहुत कुछ शुद्ध हो जाती है। इस मिट्टी मिले हुए जलको तव लकडीके बने छीछले नलोकी पंक्तियोंमे लेजाते हैं जहाँ मिट्टीके और भी अपद्रव्य नीचे वैठ जाते है इन नलोंको ड्रेग कहते है। इन नलोसे निकला जल तव गढेके तलपर पम्प किया जाता है। यह जल सफेद दूध-सा होता है। इस जलमे जो मिटी रहती है उसमे वहुत महीन रेत और अभ्रकके

बहुत छोटे-छोटे कण छिटके रहते है। यह जल तब लम्बे-लम्बे खुले नलोंमें बहाया जाता है। ये नल पत्थर वा काठके बने होते है । ये एक दूसरे बरतनसे लगे हुए होते हैं। इन बरतनोको 'मायकास' कहते है। यह बरतन प्रायः १५० फुट लम्बा और इतना ही चौड़ा होता है।

चित्र १—सफ़ेद मिट्टीकी खोदाई

ऐसे बरतनका चित्र आगे दिया हुआ है (चित्र २)। इस बरतनमेंरेत और अभ्रकके टुकडे निक्षिप्त होजाते है।
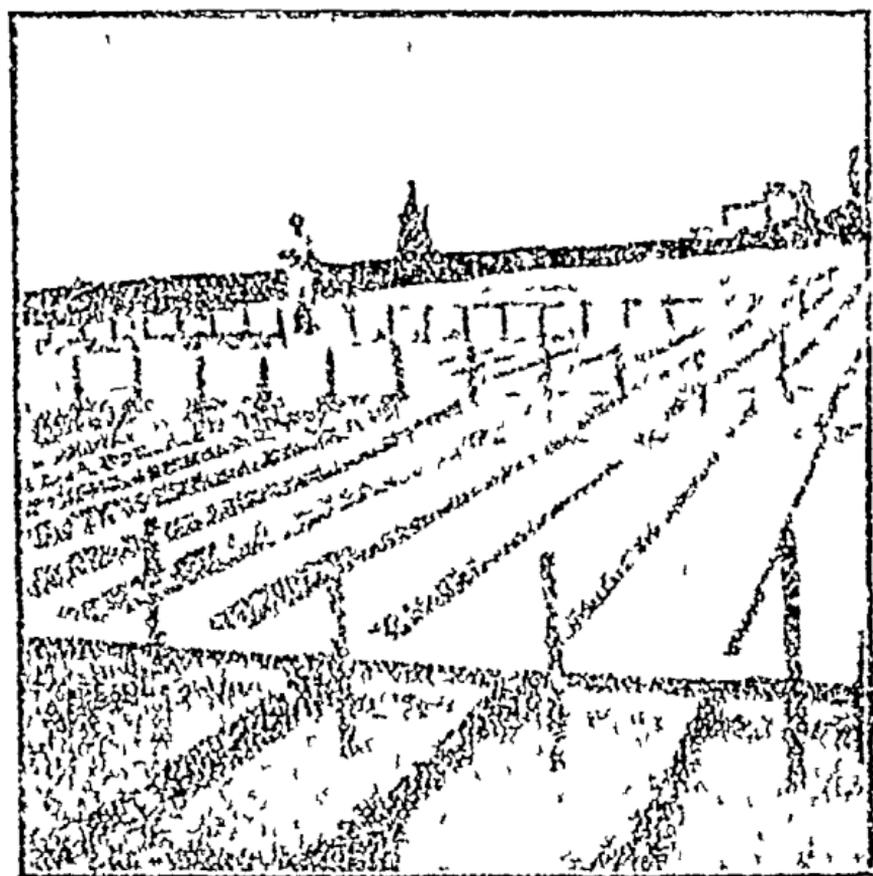
चित्र २—मायकास

यह बरतन पाँच वा सात खण्डोमे विभक्त होता है। ये खण्ड एक-दूसरेसे नीचे तलपर स्थित होते है। प्रत्येक खण्ड फिर डेढसे दो सौ फुट चौडी क्यारियोंमे विभक्त होता है। इन्हे ऐसा विभक्त करनेका उद्देश्य

यह होता है कि उनमें जलके प्रवाहकी गति कुछ कम होती जाय ताकि अपद्रव्योंके छोटे-छोटे टुकड़े तलपर बैठते जायँ। इनमें जल ४० से ५० फुट प्रतिमिनट-की गतिसे बहता है। इन बरतनोंसे फिर मिट्टीवाला जल छोटे-छोटे नलोंके द्वारा बहकर सीमेन्टके बने हुए गोलाकार कूप सदृश गढ़ेमें आता है जिसे स्थिर होनेवाला गढा—निक्षेप कुंड (सेटलिंग-पिट)
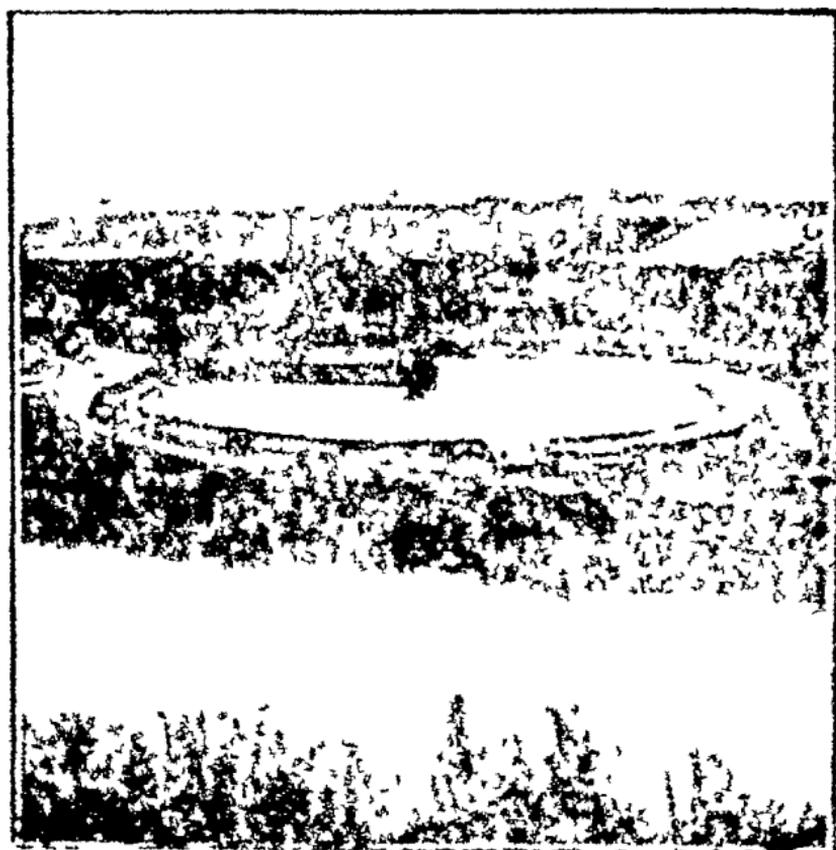
चित्र २—निक्षेप कुंड

कहते है (चित्र ३)। यह कुण्ड नीचेकी ओर पतला होता जाता है। इनके पेंदेमें डेढ इच व्यासका छेद होता है। इन कुण्डोके व्यास १५ से २० फुटतक होते हैं। ये कुंड प्राय १० फुट गहरे होते है। इनकी संख्या ३ से अधिक होती है। इन कुंडोंके पार्श्वमे छेद होते हैं जिनसे मिट्टीके बैठ जानेपर पानी निकाल दिया जाता है। यह पानी फिर मिट्टीको घुलानेके लिए प्रयुक्त होता है।

इन कुण्डोंसे मिट्टीकी जो मलाई प्राप्त होती है उसमे प्राय २५ प्रति सैकडा ठोस पदार्थ रहता है। यह सुखानेवाले हौजमे रख दिया जाता है और उनके ऊपर जो जल इकट्ठा होता है वह समय-समयपर निकाल लिया जाता है। इस प्रकार इस मिट्टीमे प्राय ५० प्रतिशत जल रह जाता है। इन हौजोंके आकार समकोणाकार होते हैं, और ये प्राय ६०से १८० फुट लम्बे और ३० से ६० फुट चौडे होते हैं। इनकी गहराई ६ से १० फुटतक होती है। इन हौज़ोंमें बहुत महीन छेद होते हैं ताकि उनसे स्वच्छ जल बाहर निकाल लिया जा सके।
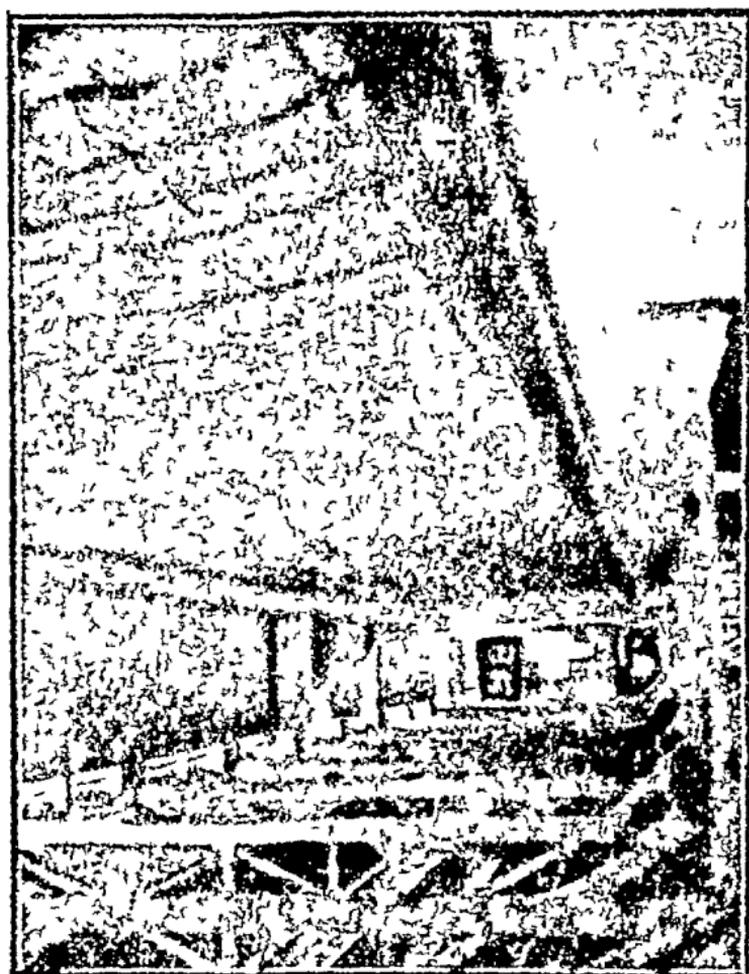
चित्र ४—सुखानेवाले कडाहे

इस मिट्टीको अब 'सुखानेवाले कडाहों' (ड्राई-पेन) में रखते हैं (चित्र ४)। इन कडाहोंका तल कुछ नीचा होता है ताकि मिट्टी आसानीसे उनमें रखी जा सके। ये कड़ाह प्रायः १२० फुट लम्बे और २ फुट चौड़े छिछले अग्नि-जित (फायर-क्ले) मिट्टी

बने होते है। इन कडाहोके नाचे एक सिरेकी ओर आग जलाई जाती है ताकि वे गरम किये जा सके। दूसरे सिरेकी ओर चिमनी रहती है। जहां आग जलती है, कडाहका वह सिरा अधिक गरम रहता है और चिमनी-की ओरवाला सिरा कम। इन कडाहोंमे प्राय ६ इंच मोटाईकी मिट्टी बिछादी जाती है। जब वह पर्याप्त सूख जाती है तब उसे अनेक वर्गोंमे काट डालते है ताकि बिलकुल सूख जानेपर वह समकोण टिकियोमे टूट जाती है। इसी रूपमे यह बाजारोमे बिकती है। इस सूखी मिट्टीमे प्राय ८ से १० प्रतिशत जल रहता है।

मिट्टी निकालनेकी जो विधि इस देशमे प्रयुक्त होती है वह बहुत सरल है। यहां हाथोसे मिट्टी तोडी और बुकी जाती है। इस बुकी मिट्टीपर तब पर्याप्त पानी डालते है ताकि इस मिट्टीसे ककडके टुकडे अलग हो जायें। इस मिट्टीवाले जलको तब लम्बी सकरी नलियोके द्वारा बहाते है ताकि अपद्रव्योंके बडे बडे टुकडे वहाॅ बैठ जायॅ। इसके बाद मिट्टीवाले जलको निक्षेप कुण्डमे लेजाते है और वहासे उसे टिकियोंमे बनाकर धूपमे सुखाते है। धोनेपर भी मिट्टीमे कुछ हल्का पीला रङ्ग रह जाता है। ऐसी मिट्टीमे थोडा एनिलीन रंगका घोल डालकर पीले रंगको दूर करते

है। जिस कुण्डमे मिट्टी निक्षिप्त होती है उसमे लानेके पहले एनिलीन रंगके घोलको मिट्टीवाले जलके साथ मिला देते है।

केओलीनका शोधन

उपर्युक्त विधिसे प्राप्त मिट्टी बिलकुल शुद्ध नहीं होती। उसे विशेष-विशेष कार्यों के लिये फिरसे शुद्ध करनेकी आवश्यकता पड़ती है। इसके लिये मिट्टीको जलके साथ मिलाकर उसमे किसी विद्युत-विश्लेष्यको डालकर दो-तीन घण्टेके लिये छोड़ देते है ताकि उससे अपद्रव्य नीचे बैठ जायँ। यह शोधन सीसा धातुके सिलिंडरमे होता है। यह सिलिंडर एक हौज़मे रक्खा जाता है। सिलिंडर और हौज़के बीच पीतलके तारोकी जाली रहती है जो ऋणद्वार (कैथोड) का कार्य करती है। सिलिंडर स्वयं धनद्वार (एनोड) होता है। इसमे ६० से १० वोल्ट तककी विद्युत-धारा प्रवाहित की जाती है। विद्युत-धारासे अशुद्धियाँ इकट्ठी होजाती हैं, और वहाँसे हटा ली जाती है। इससे १२ मिलिमीटरकी मोटाईकी तहमे मिट्टी सिलिंडर-मे इकट्ठी होती है। वहांसे हटा कर वह बरतनोंमे रक्खी जाती है। ऐसी मिट्टीमे २० से २५ प्रतिशत

जल रहता है। इसे दबा और सुखाकर बाजारोंमे भेजते हैं।

मिट्टियाँ अनेक प्रकारकी होती है। बरतन बनानेके लिये मिट्टीमें नम्रता होनी चाहिए। किसी आर्द्र स्थानपर मिट्टीके रखनेसे इसकी नम्रता बहुत कुछ बढायी जा सकती है। इस क्रियाको एजिंग और सावरिंग कहते है। इस क्रियामे सम्भवत मिट्टीके कार्ब-निक पदार्थ विच्छेदित होकर हलके अम्ल बनते है जो मिट्टीके छोटे-छोटे कणोंको स्कंधित कर उसकी नम्रताका बढाते है। यदि मिट्टीमे अधिक क्षार हो तो उसको नम्रता बढती नही है। ऐसी दशामे कुछ सिरका वा सिरकाम्ल (एसेटिक ऐसिड) डालकर मिट्टीकी नम्रता बढानेमे सहायता करते है।

जो मिट्टी उच्च तापक्रमके सहन करनेमे समर्थ होती है उसे अगालनीय मिट्टी (रिफ्रैक्टरी मिट्टी) कहते हैं। शुद्ध मिट्टियाँ सब रिफ्रैक्टरी होती है पर प्रधानत अग्निजित मिट्टी ही इसके अन्तर्गत आती है। अग्निजित मिट्टियाँ साधारणतया कोयलेकी तहोंके नीचे पायी जाती हैं। ऐसी मिट्टियोंका संगठन एकसा नहीं होता। इनका रंग कुछ भूरा होता है और ये सघन होती हैं। इनमे भिन्न-भिन्न दर्जेकी कठारता होती है। अग्निजित मिट्टियाँ राज-

महल पहाड़ियोंमे प्रचुरतासे पायी जाती है और कलकत्तेकी बर्न कम्पनी द्वारा भट्टियोंके लिये ईंट बनानेमे प्रयुक्त होती है।

एक दूसरे प्रकारकी मिट्टीको काचीय मिट्टी (विट्रिफायेबिल) कहते हैं। यह मिट्टी प्रायः १२५०° श॰ पर कांचसी अंशतः द्रवित हो जाती है। इसमें रिफ्रैक्टरी अगालनीय मिट्टीकी अपेक्षा द्रावक (फ्लक्स) की मात्रा अधिक रहती है। चित्रित पत्थरो वा स्वास्थ्य-सम्बन्धी सामानो वा रासायनिक उद्योग-धन्धे सम्बन्धी सामानोके निर्माणमे यह काम आती है।

एक तीसरे प्रकारकी मिट्टीको गालनीय मिट्टी कहते है। यह अपेक्षाकृत निम्न तापक्रमपर ही अपने आकारको खो देती है। ऐसी मिट्टी मिट्टीके बरतनो वा टाइलोके बनानेमे काम आती है। इसमे सिलिकाकी मात्रा बहुत अधिक रहती है। चूना, सोडा और पोटाश भी इसमें अधिक रहते है। लोहेके कारण इसका रंग भी कुछ और ही होता है। किसीका लाल, किसीका नारङ्गी, किसीका पीला और किसीका हरा-पीला होता है।

फेलस्पार

एक दूसरेसे मिलते-जुलते हुये कुछ खनिजोके समूहको फेलस्पार कहते है। ये चट्टानोके बड़े

महत्व पूर्ण अवयव है। आग्नेय चट्टानोंमे प्राय ६० प्रतिशत फेलस्पार होते हैं। इन खनिजोमे भिन्न-भिन्न मात्रामे सोडा वा पोटाश वा चूना वा एल्यूमिनाके सिलिकेट होते हैं। विभिन्न प्रकारके फेलस्पारोको एक-दूसरेसे विभेद करना कठिन होता है। इनका घनत्व प्राय २५ से २६ होता है। शुद्ध क्षार-फेलस्पार पारदर्शक और वर्णहीन होता है। अनेक फेलस्पारोका रंग अशुद्धियोकी बहुत अल्प मात्राके कारण होता है। इन अशुद्धियोंके कारण ही यह अपारदर्शक हो जाता है। लोहेके ऑक्साइडोके कारण इसका रंग पीला वा लाल वा गुलाबी होता है। गुलाबी फेलस्पार पोटाशके भी होते है। भूरे रंगके फेलस्पार चूनेके होते है। फेलस्पार ११२०° से १२००° श० पर पिघलता है। ११२०° श० तक जलनेसे यह बहुत कम प्रसारित होता है और तब इसका घनत्व बहुत कम घटता है। फेलस्पार जलसे जल-विच्छेदित हो क्षार-सिलिकेट बनता है। जलवायुका इसपर बहुत जल्द असर पडता है। जल-वायुसे विच्छेदित हो स्फटिक और केओलीनमे परिणत हो जाता है। इसके साथ-साथ कुछ और जल-संयोजित (सार्द्र) एल्यूमिनि-यम सिलिकेट बनते है।

चीनी पत्थर

ग्रेनाइट चट्टानोंके अंशतः विच्छेदनसे चीनी-पत्थर बनता है। यह स्फटिक और फेलस्पारका बना होता है। फेलस्पारके स्थानमे चीनी-पत्थर प्रयुक्त होता है। यह बहुत कठोर होता है और ग्रेनाइटके सदृश डायनामाइटसे तोड़ा जाता है। चीनी-पत्थर अनेक प्रकारका होता है। इसका घनत्व प्राय २·६ होता है। यह १२००° श० पर पिघल कर कांच-सा बन जाता है।

स्फटिक और चकमक

स्फटिक और चकमक (क्वार्ट्ज़ और फ्लिण्ट) सिलिकेटके विभिन्न रूप है। ये प्रचुरतामे प्रकृतिमे पाये जाते हैं। सिलिकेटके विभिन्न रूप तीन प्रधान समूहोंमे विभाजित किये जा सकते है। मणिभीय सिलिका साधारणतया स्फटिक ट्राइडिमाइट और क्रिस्टोबेलाइट रूपसे पाया जाता है। इनके भौतिक गुण विभिन्न होते है पर रासायनिक संगठन इनका एक ही है। ये शुद्ध सिलिकेट हैं। जब शुद्ध होता है तब स्फटिक बिना रंगका होता है। ऐसा स्फटिक चश्मा और प्रकाश-यन्त्रोंके निर्माणमें प्रयुक्त होता है। इसे रॉक-क्रिस्टल कहते हैं। पर यह कदाचित् ही शुद्ध रूपमे पाया जाता है। इनमें कुछ अशुद्धियाँ रहती है जिनसे यह धुंधले रंगका वा अपारदर्शक होता है। इसका घनत्व २·६५ होता है। यह १७५०°

श० तक भी पिघलता नही है। गरम करनेपर यह प्रतिशत १४ तक प्रसारित होता है।

अमणिभीय जल-संयोजित सिलिका वा ओपालमे प्राय: १२ प्रतिशततक जल रहता है। इसके कुछ नमूने बहुत अधिक चमकदार होते है। अत यह बहुमूल्य पत्थर वा जवाहरातके रूपमे बहुत अधिक प्रयुक्त होता है।

चकमक, चर्ट और चालकीडौनी पत्थरोमे कुछ मणिभीय सिलिकाके साथ साथ न्यूनाधिक अमणिभीय सिलिका रहता है। फ्लिट (चकमक-पत्थर) प्रकृतिमे भूरे वा कृष्ण रगमे पाया जाता है। ऐसा समझा जाता है कि स्पज वा अन्य जान्तव पदार्थोके अति-सूक्ष्म केन्द्रपर सिलिकाके शनै शनै अवक्षेपणसे चकमक बनता है। इसमे प्राय ९५ प्रतिशत सिलिका होता है। शेप ५ प्रतिशत अशुद्धियाँ खडिया और जान्तव पदार्थ होते है। चकमकका घनत्व २ ६ होता है। यह प्राय १७५०° श० पर पिघलता है। स्फटिककी अपेक्षा यह अधिक प्रसारित होता है। आगमे पकानेसे यह जल जाता है। जलाहुआ फ्लिट बरतन बनानेमे प्रयुक्त होता है। इसका घनत्व प्राय: २ ३ से २ ४ होता है। कृष्णवर्णकी अपेक्षा भूरे वर्णका फ्लिट जलानेपर अधिक टूटता है क्योंकि प्रसारकी गति

अधिक होती है। नाइट्रोजनवाले कार्बनिक पदार्थोंके कारण इसका रंग होता है। अतः गरम करनेसे इसका रंग सरलतासे नष्ट हो जाता है।

१३००° श तक गरम करनेसे तापका प्रभाव स्फटिक और चकमकपर विभिन्न होता है। स्फटिककी अपेक्षा चकमक अधिक प्रसारित होता है जिसका परिणाम यह होता है कि गरम करनेपर चकमकका घनत्व स्फटिककी अपेक्षा बहुत कम हो जाता है। आगमें जलानेपर जो स्फटिक वा चकमक प्राप्त होता है उसकी सक्रियता बहुत बढ जाती है। बिना पकाये हुये चकमक वा स्फटिकके प्रयोगसे जो बरतन बनते हैं उनपर लुक कठिनतासे चढ़ता है। जब बिना पकाये हुए सिलिकाको प्रयुक्त करते हैं तब ऐसे बरतनोंको बहुत उच्च तापक्रमतक गरम करनेकी आवश्यकता होती है।

बरतनोंके बनानेमें स्फटिक और चकमकके कणोंके धाराकोंका बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। यदि इनके कण बहुत महीन पिसे हुये हैं तो ऐसे बरतन निम्न तापक्रमपर ही पक जाते हैं। बहुत बारीक पीसनेसे उनका आयतन भी बहुत कुछ बढ़ जाता है। पर यदि बरतनोंके सिलिकाकी कणिका अतिसूक्ष्म होती है तो उनकी सान्द्रता और मज़बूती कम हो जाती है।

प्लास्टर ऑफ पेरिस

जब सिलखडी (जिप्सम) को प्राय: १२०° श० तक गरम करते हैं तब उसके जलका कुछ अंश निकल जाता है और तब वह सफेद चूर्णके रूपमे परिणत हो जाता है। इस सफ़ेद चूर्णको 'प्लास्टर ऑफ़ पेरिस' कहते है क्योंकि यह पहले पहल पेरिसके निकट पाया गया था। यदि जिप्समको २००° श० तक गरम करें तो यह अनार्द्र जिप्समसे परिणत हो जाता है जो फिर पानीसे जमता नही है। अत इस अनार्द्र जिप्समको 'मृत प्लास्टर' कहते है। इसमें सोहागा वा फिटकरीके मिलानेसे जमनेका गुण कम हो जाता और साधारण लवण, नमक, के मिलानेसे बढजाता है। जमा हुआ प्लास्टर फिटकरीसे और अधिक जम जाता है। प्लास्टर-ऑफ पेरिसके चूर्णमे जो जल मिलाया जाता है उस जलकी मात्राका उस प्लास्टरके जमने पर बहुत प्रभाव पडता है। जलकी मात्रासे उसके घनत्व, सान्द्रता और प्रबलतापर बहुत असर होता है। मूर्त्तियो, आभूषणो, चित्रित सामानों और साँचोके बनानेमे प्लास्टर ऑफ पेरिस प्रयुक्त होता है। जमनेपर यह प्लास्टर फैलता है इससे किसी वस्तुके चिह्नोको वास्तविक रूपमें ढालनेमें उसका साचा बनानेमे यह बडा उपयोगी है।

प्लास्टर ऑफ पेरिस बनानेके लिये जो जिप्सम

प्रयुक्त होता है वह संगमरमर-सा सफ़ेद पत्थर होता है पर इतना कोमल होता है कि चाकूसे सरलतासे खुरचा जासके। ऐसा सफ़ेद पत्थर होनेसे पहले इसका रंग कुछ धुंधला होता है और यह तब अधिक कठोर होता है। ऐसा पत्थर साधारणतया सीमेंट बनानेमें काम आता है।

प्लास्टर ऑफ़ पेरिस बनानेमें जिप्समके बड़े-बड़े पत्थर वायुमें सुखाकर तब प्रायः २ इंच व्यासके टुकड़ोंमें तोड़े जाते हैं। ये तब लोहेके थालमें बिछाकर ये थाल ट्रौलीपर रख दिये जाते हैं। इस देशमें इन पत्थरोंमें २२ से २५ प्रतिशत जल रहता है। ये ट्रौली तब एक छोटी भट्टीमें (मफ़ेल-फरनेसमें) ठेल दिये जाते है, जो बाहरसे कोयलेसे १८० से १९० श० तक गरमकी जाती है।

ये ट्रौली भट्टीमें प्रायः ४८ घण्टा रहते है। समय-समयपर इन ट्रौलियोंसे नमूने निकाल कर उनके जलके अंशकी मात्रा निर्धारित होती है। जब उनमें जल-की मात्रा प्रायः ६ प्रतिशत होजाती है तब ट्रौलियोंको भट्टीसे निकाल लेते है। ऐसा जला हुआ जिप्सम बहुत कोमल होता है और चक्कियोंमें पीसा जाता है। ये चक्कियां पत्थरोंकी बनी होती हैं। इनमें एक पत्थर उर्ध्वाकार स्थिर रहता है और उसके आसपास दो पत्थरकी-

चक्रियाँ घूमती रहती है जिनसे पीसा जाता है । ये पीसे हुए चूर्ण तब एलक्ट्रो-मैगनेटमे ले जाए जाते है और वहा-से फिर उपयुक्त बारीक चूर्णमे पीसे जाते है । ठीक प्रकारसे पीसा हुआ प्लास्टर ऑफ पेरिस ६० नम्बर-की चलनीमे बिलकुल छन जाता है ।

जब थोडी तादादमे जिप्समको प्लास्टर ऑफ-पेरिसमे परिणत करना होता है तब जिप्समको पहले चूर्ण कर चलनीमें छानते है । इसे तब सीधे आगमे लोहेके कडाहमे गरम करते है और उसे बरा-बर चलाते रहते है । यह चूर्ण वस्तुत' उबलता है । प्राय' ४५ मिनटमे इसका उबलना बन्द होजाता है । तब इसे हटा लेते हैं । यह अब कामके लिये तैयार जिप्सम प्रचुर मात्रामे हिन्दुस्तानमे पाया जाता है । पंजाबमे झेलमके निकट बन्नू और कोहाट जिलोमे यह पाया जाता है । राजपूतानाके मारवाड, बीकानेर, आदि जोधपुरमे यह मिलता है । सयुक्तप्रान्तके देहरादून, कमायूँ और गढवालमे हलद्वानीके निकट इसके निक्षेप मिले है । बम्बई, काठियावाड, कच्छ और सिन्धमे पाया जाता है । मद्रास प्रान्तके चिंगलपट और नेलोर जिलोमें भी यह पाया गया है ।

पांचवां अध्याय

मिट्टीके बरतनका निर्माण

सांचा

बरतन बनानेमें साँचे बहुत आवश्यक हैं। ये कीमती भी होते हैं। साधारण तश्तरीसे लेकर सुन्दर सुराही तक बनानेमें साँचेकी ज़रूरत पड़ती है। साँचा एक प्रकारकी वस्तुके लिये एक ही होता है। किसी-किसी बरतनके भिन्न-भिन्न भागोंके लिये आवश्यकतानुसार अनेक भी हो सकते हैं। साँचे या तो अभिजित मिट्टीके बनते हैं या प्लास्टर-आफ़-पेरिसके। प्लास्टर आफ़ पेरिसके साँचोंकी अपेक्षा अभिजित मिट्टीके साँचे अधिक साफ सुथरे होते हैं और उनपरके चिह्न अधिक स्वच्छ होते हैं। ये अधिक दिन तक टिकते भी हैं। पर इनमें दो दोष भी होते हैं। ये अधिक कीमती होते हैं और उनमें जलके सोखनेकी शक्ति बहुत कम होती है। जलके सोखनेकी शक्ति कम होनेके कारण अधिक संख्यामें इनकी आवश्यकता पड़ती है। इन दोषोंके रहते हुए भी प्यालोंकी मुट्ठियों और उसी प्रकारके छोटे छोटे सामानों जैसे फूल, पत्ते, माला और आभूषणोंके बनानेके कामोंमें इनका व्यवहार होता है।

आजकल प्लास्टर-आफ़-पेरिस अधिक मात्रामें साँचोंके तैयार करनेमें प्रयुक्त होता है। इसके साँचोंमें सोखनेकी शक्ति बहुत अधिक होती है। ये आसानीसे तैयार भी होते हैं और अधिक समय तक टिकते भी हैं यदि उन्हें तैयार करनेके १०—१५ दिनके बाद प्रयोगमें लावें। जैसा बरतन तैयार करना होता है वैसा ही साँचा बरतनसे कुछ बढ़के होना चाहिये ताकि उसमेंके बने बरतन सिकुड़ कर पूर्व बरतनके समान उतरें। प्याले, सुराही और वैद्युत-पृथगन्यासकके साँचे साधारणतया प्लास्टरके होते हैं पर पेचीले आकार और सुन्दर चित्रोंसे आभूषित सामानोंके साँचे अग्निजित् मिट्टीके ही बनते हैं।

नमूनेका बना साँचा कदाचित् ही ढालनेके लिये प्रयुक्त होता है। इस साँचेको "ब्लौक" वा "मास्टर" साँचा कहते हैं। ये इसके साँचोंके ढालनेमें प्रयुक्त होते हैं। और इन दूसरे साँचोंसे ही वे सामान बनते हैं। प्रयोगमें लानेके पूर्व साँचोंको पूरा सुखा लेना चाहिये। बीच-बीचमें उन्हें सुखाते रहनेसे वे अधिक दिन तक टिकते हैं। उन्हें कम गरमीमें ही सुखाना अच्छा होता है।

जिस 'मास्टर' साँचेसे दूसरे साँचे तैयार होते हैं उसके तहकी धूलोंको खूब पोछ डालते हैं। यदि ये बहुत सूख गये हों तो उन्हें कुछ सेकड तक पानीमें डुबा लेते हैं। तब उसे कोमल ब्रशके द्वारा पानी और साबुनके पायस्यसे

रगड़ लेते हैं। एक भीगे स्पञ्जसे तब साबुनको पोछ डालते हैं। अब यह व्यवहारके लिये तैयार है।

अब प्लास्टर-आफ़-पेरिस २ भाग और जल १ भागको मिलाकर उसे खूब हिलाते हैं ताकि लेई बनकर प्लास्टर-का जमना शुरू हो जाय। यह करीब ५ मिनटमें हो जाता है। प्लास्टरकी इस लेईको घूमते हुये साँचेमें डालते जाते हैं और लेईको खूब हिलाते जाते हैं ताकि हवाके बुलबुले उससे निकल जायं। फिर प्लास्टरको जमनेके लिये छोड़ देते हैं। जब यह जम जाता है तब उसे साँचेसे निकाल डालते हैं। साँचेके तलको अब लोहेके चाकूसे साफ कर लेते हैं। उसपर यदि कोई नम्बर लिखना होता है वा कोई चिह्न बनाना होता है तब लिख व बना लेते है। साँचे आवश्यकतानुसार कठोर वा कोमल हो सकते हैं। कम पानी देनेसे वे कठोर होते हैं, और अधिक पानीसे कोमल। मास्टर साँचे साधारणतया कोमल प्लास्टरके बनते हैं पर जिन साँचोंसे वस्तुएं बनती हैं उन्हें "केसिंग" कहते हैं। ये साधारणतया कठोर प्लास्टरके बनते हैं।

जब प्लास्टरके साँचे बहुत दिनों तक विशेषतः नम स्थानोंमें रखे रहते हैं तब उनके ऊपर सफेद आच्छा-दन पड़ जाता है। इस आच्छादनमें सैन्धक गन्धेत (सोडियम सल्फ़ेट) पर्याप्त रहता है। यह सोडियम सल-फ़ेट कुछ तो मिट्टीसे आता है और कुछ प्लास्टरके पानीमें घुलाने-

से और कुछ कैलसियम सलफेटपर सोडियम कार्बनेटकी क्रियासे बनता है। कुछ पदार्थ प्लास्टरकी विलेयताको बढ़ाते हैं। इनमें विशेष फॉसफेट हैं। इसी कारण बोन चीनी (बोन-चाइना) के साँचे उतने दिन नहीं टिकते जितने मिट्टीके साँचे टिकते हैं। प्लास्टरके साँचे आर्द्र स्थानमें रखे रहते है उनपर सोडियम सलफेटका बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। यदि सोडियम सलफेटके विलेयको मिट्टीके बरतनोंपर डाला जाय तो यह विलेय बरतनके अन्दर धीरे-धीरे प्रविष्ट कर हफ़ते दो हफ्तेमें उस बरतनको खा डालता है। यही कारण है कि आर्द्र स्थानमे रखे साँचे बहुधा खराब हो जाते हैं और काममें लानेपर टूट जाते हैं। मिट्टीके सदृश किसी नम्र पदार्थको किसी विशेष आकारमें बनानेमें अनेक क्रियाओंका सम्पादन करना पड़ता है। इनमें निम्न लिखित क्रियाए प्रमुख हैं।

(१) फेकना

चाकपर फेकना वा डालना

गोल बरतनोंके बनानेमें चाककी ज़रूरत पड़ती है। चाक दो प्रकारके होते हैं. एक देशी चाक जो स्वय कुम्हारोंके द्वारा वा उनके सहायकोंके द्वारा चलाये जाते हैं। दूसरे वे चाक जो यंत्रोंसे चलाये जाते हैं। हाथसे चलनेवाले चाकमें एक गोला चक्र होता है जो नीचेकी ओर ज़मीनपर किसी खूँटीसे

लगा होता और ऊपरसे किसी डंडेके द्वारा चाकके छेद
घुमाया जाता है। कुम्हार जमीनपर बैठकर उस चाक
घुमा कर उसपर मिट्टीका लोंदा रखकर आवश्यक आकार
हाथोंसे बनाता है। बरतनके आकार नष्ट न हो जायं इस
ज़रूरी है कि मिट्टी ऐसी गीली (नरम) न हो कि कु
दबावसे ही उसका आकार नष्ट हो जाय। पर मिट्टी पर्या
कठोर भी नहीं होनी चाहिये नहीं तो जैसा रूप बरतन
देना चाहते हैं वैसा सरलतासे न दे सकेंगे। अतः च
कुम्हार अपनी मिट्टी ऐसी बनाता है कि न वह अधि
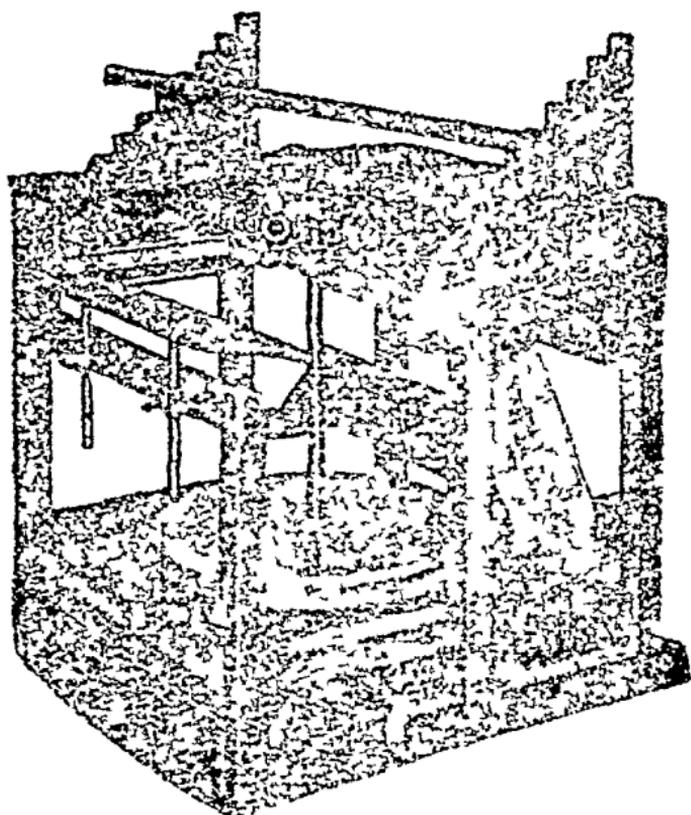
चित्र ५—कुम्हारका उन्नत चाक

कठोर होती है और न अधिक नरम। वह अपने हाथोंको इस प्रकार घुमाता है कि वह चाकके घुमावके अनुकूल हो।

यंत्रोंसे चलनेवाला चाक दूसरे प्रकारका होता है। यह लकडीके बने हुये फ्रेम या मेजपर स्थित होता है। इस मेज़के केन्द्रमें एक छड होता है। इसी छडपर चक्र लगा रहता है। इस चक्रके नीचेके भागमें एक ठोस फ्लाई-व्हील लगा होता है जिसे चाकपर काम करनेवाला कुम्हार पैरसे चलाता है। कुम्हार स्वयं एक तिपाईपर बैठा रहता है और पैरोंसे फ्लाई-व्हीलको चलाता जाता है और हाथोंसे वरतनोंको गढ़ता जाता है। जब किसी बडे बरतनको वा किसी ठीक-ठीक आकारके वरतनोंको बनाना होता है तब चाकको वडी दृढ़तासे चलानेकी ज़रूरत पडती है। ऐसी दशामें एक दूसरे पहियेकी जरूरत पडती है जिसके चलानेका सिद्धान्त वही है जो चरखोंके पहियेको चलानेका सिद्धान्त है। तब चाकको चलानेके लिये कुम्हारके अलावा एक और आदमीकी जरूरत पडती है। जब अधिक सामानोंको तैयार करना होता है तब बिजलीसे चाकको चलाते हैं। पर इसमें असुविधा यह होती है कि चालको इच्छानुसार न्यूनाधिक जल्दीसे नही कर सकते। चाकको चलानेके पहले उसपर मिट्टीके लौंदे रख लेते हैं।

(२) घुमाना।

जब किसी आकारके ठीक प्रतिरूपको बनाना होता है

तब ऐसे आकारके बनानेके लिये खराद (चक्र यन्त्र, लेद) की ज़रूरत होती है। खराद पर चढ़ानेके पहले वह मिट्टी इतनी कड़ी होनी चाहिये कि दबावको सह सके पर साथ ही साथ इतनी कोमल भी न होनी चाहिये कि नखोंसे उसपर खुरचन पड सके। इसके लिये ऐसी मिट्टी सर्वोत्कृष्ट होती है जो खरादमें चढ़ानेपर २से ३ इंच लम्बा छीलन निकाल सके। मिट्टीके सामानोंके तैयार करनेमें खड़े ऊर्ध्वाधार वा पड़े प्रतिगामिक दोनो प्रकारके खराद प्रयुक्त होते हैं। खरादके काठके मूठमें अनेक प्रकारके इस्पातके छोटे-छोटे चाकूके फल लगे रहते हैं। इन्ही फलोंसे मिट्टीके बरतन छीले जाते हैं अन्तमें वे इस्पातके फलो वा सींघके फलोंसे ऐसे छीले जाते हैं कि उनपर चमक भी आ जाती है। अच्छे मिट्टीके बरतनोंके तैयार करनेमें चतुर अनुभवी कुम्हारका होना बहुत आवश्यक है। यदि इन बरतनोंका क़द वा आकार छोटा बडा हो तो वह सरलतासे जाना जा सकता है पर उनमें कोई मरोड़ हो तो उसका पहचानना बहुत कुछ कठिन होता है। ये मरोड़ खरादको अनियमित रूपसे चलानेसे बनते हैं। ये मरोड़ पालिश करनेसे लुप्त हो जाते हैं पर कैसी ही चतुरतासे ये पालिश किये क्यों न हों पकाने पर वे फिर प्रकट हो जाते हैं। बरतनोंपर जब कोई नक़ाशी करनी होती है तब नकाशीके पट्टीको जब खरादमें घुमाते है उसी समय दबाते हैं। इन पट्टियोंपर थोड़ा तारपीनका

तेल लगा देनेसे इनकी नक्काशी अच्छी उतरती है।

(३) जौलीपर चढ़ाना।

जिस क्रियासे मिट्टीके बरतनोंको प्लास्टरके साँचेमें ढाल कर बनाते हैं उसे जौलीपर चढ़ाना या जौलीइंग कहते हैं। यह एक यंत्रके द्वारा होता है जिसे जिगर और जौली कहते हैं। यह क्रिया उन बरतनोंके लिये प्रयुक्त होती है जो गोल और अण्डाकार होते हैं और जिन्हें बहुत अधिक तादादमें तैयार करना पड़ता है।

जिगर कुम्हारके चाकके सदृश एक खड़ा ऊर्ध्वाधार स्तम्भ होता है। इसके ऊपरके भागमें प्यालेके आकारका बरतन होता है जिसमें साँचा रखा जाता है। यह एक नियमित गतिसे साधारण शक्तिसे सञ्चालित होता है। इनमें पैरका ब्रेक होता है जिससे इच्छानुकूल वह चलाया या बन्द किया जा सकता है।

चित्र ६ स्तम्भ
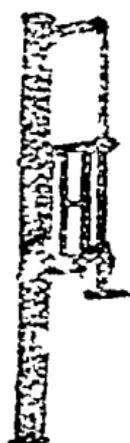
जौली एक ऐसा यंत्र है जिसमें छिलनी या प्रोफाइल लगा होता है। यह इस प्रकार लगा होता है कि वह जिगर पर रखे साँचेके बाहर और भीतर दोनों ओर लगाया जा सके। जौली दो प्रकारके होते हैं। एक प्रकारकी जौलीमें तिरछी बाजु होती है और उसे समतुलित करनेके लिये वजन होता है। यह एक स्तम्भपर चढ़ाया हुआ होता है।

उस वजनकी दूसरी ओर बाजुमें ही एक खाना होता है जिसमें छिलनी लगी रहती है। दूसरे प्रकारकी जौलीमें एक ऊर्ध्वाधार स्तम्भ होता है जिसमें दो वा अधिक पुलियां लगी रहती हैं। इन्ही पुलियोंमें एक खड़ा इस्पातका छड़ लगा रहता है और छड़के साथ ही समतुलित भार। इसी छड़के नीचले छोरमें छिलनी लगी रहती है। जौली घडे, सुराही इत्यादि बीचमे निकले हुये बरतनोंके तैयार करनेमें प्रयुक्त होती है।

छिलनी लोहे वा इस्पातकी मोटी चादरें होती हैं जिनके एक किनारेपर कोनियाँ निकली होती है। इनका आकार ऐसा होता है कि नये बने बरतनोंसे आवश्यकतासे अधिक मिट्टी उनसे हटायी जा सके और उन्हें साँचोंसे सटाकर आवश्यक आकार दिया जा सके। इन छिलनियोंको बहुत ठीक तरहसे रखना चाहिये और यदि इनके किनारे घिस जायं तो रेतकर तेज़ बना लेना चाहिये। इङ्गलैण्डमें जो छिलनियाँ प्रयुक्त होती हैं वे प्रायः ०'६ से १ सेंटीमीटर मोटी होती है। पर जर्मनी और फ्रांसमें जो प्रयुक्त होती हैं वे प्रायः ०.५ सेंटीमीटर मोटी होती हैं। छिलनीकी आवश्यक मोटाई मिट्टीकी प्रकृतिपर निर्भर करती है। मिट्टीके बरतनोंपर काफी तादादमें मिट्टीके रोड़े होते हैं। अतः यदि छिलनी विशेष मजबूत न हो तो कार्य करनेके समय हिल-डोल सकती है। इससे बरतनोंके विभिन्न भाग पर

कम वा अधिक दबाव पड़ सकता है । इससे ऐसे बरतन पकाने पर चिटक जाते हैं ।
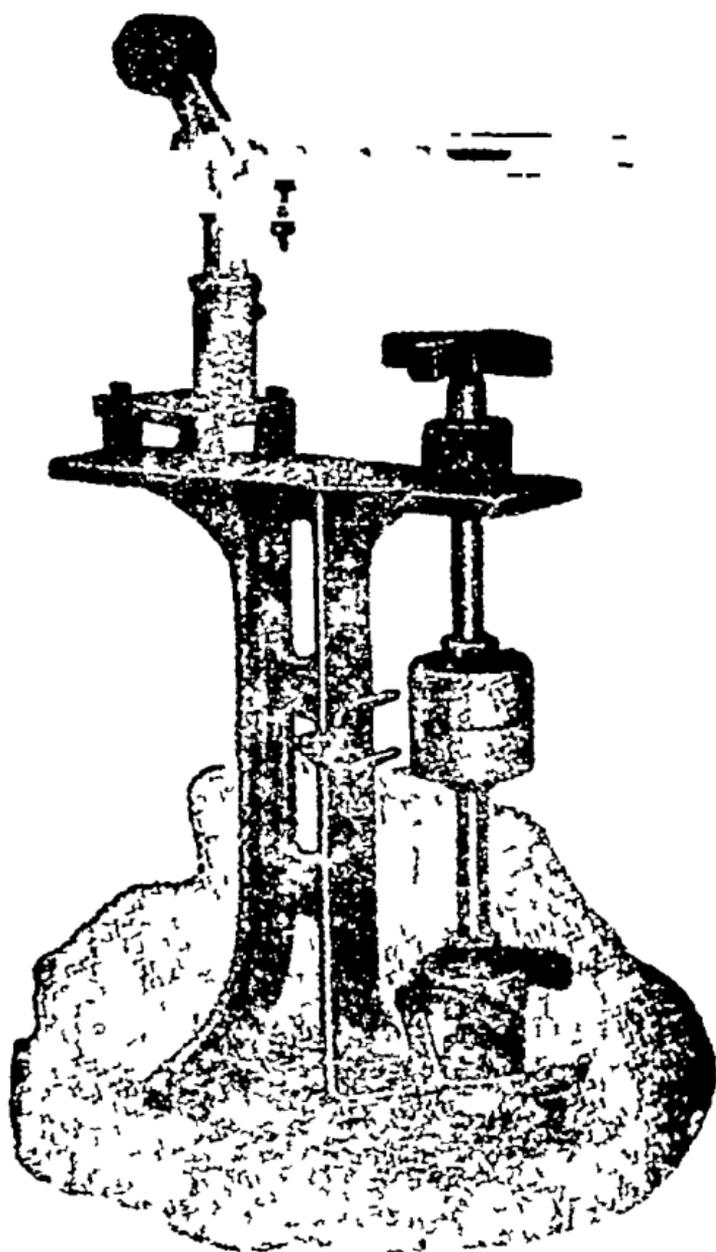
चित्र ७—जौली

तश्तरी और रकाबी इत्यादि छिछले बरतनोंके बनानेमें पहले मिट्टीके एक छीछले तवे वा "बैट"को बनाते हैं। यह एक दूसरे बैट बनानेके यंत्रमें बनता है। इस बैटको तब साँचे पर रखते हैं और एक भीगे स्पंजसे सांचे और मिट्टीके बीचकी वायुको दबाकर निकाल डालते हैं। इसके लिये घूमते हुये जिगरपर साँचेको रखते हैं और फिर छिलनी लगे हुये जौली द्वारा सांचेको दबाते हैं और हाथसे तब तक उसपर दबाव बढ़ाते जाते हैं जब तक वह सामान बन कर तैयार न हो जाय।

यदि बरतन बहुत पतले हों जैसे पोरसीलेनके बरतन होते हैं तो बैटको चमडे वा किरमिचसे आच्छादित काठके घेरेपर बनाते हैं। उठानेपर मिट्टीके बरतन टूट न जायं इससे उस काठके घेरेके साथ ही बैटको हटाकर बहुत धीरे-धीरे साँचे पर रखते हैं।

खोखले बरतन जैसे प्याले, सुराही, बेसीन इत्यादि साँचेके अन्दर बनाये जाते है और बरतनके अभ्यन्तर भागमें ही छिलनी रहती है। चिपटे बरतनोंके बनानेमें भी यही विधि प्रयुक्त होती है पर औजारोंके प्रयोगमें अधिक सावधानीकी जरूरत रहती है ताकि बरतनोंके छोर उसे छू न जायं। ऐसे बरतनोंके बनानेमें जिनके पेट बहुत बड़े और मुँह बहुत छोटे हो जैसे घडे, सुराही जग इत्यादि ऊर्ध्वाधार जौली ही अधिक उपयोगी होती है।

(४) दबाना।

प्यालेके मूठों, टाइलों (खपड़ों) और चित्रित ईंटों इत्यादिके निर्माणमें नम्र मिट्टियां प्रयुक्त होती हैं। प्यालेकी मूठ सदृश वस्तुएँ पहले प्लास्टरके साँचोंमें बनती हैं। साँचोंके दो अर्ध-भागोंके बीच नम्र मिट्टीके लोदेको रखकर हाथोंसे दबाकर आवश्यकतासे अधिक मिट्टीको निकाल डालते हैं। बडे-बडे सामानोंके लिये धातुओंके साँचेको काममें लाते हैं। साँचेके दो भाग जब एक दूसरे पर रखे जाते हैं तब उनका आकार उस बरतनके आकारका हो जाता है जो उस साँचेमें बनता है। इन साँचोंके बीच नम्र मिट्टीको रख कर आवश्यकतासे अधिक मिट्टीको निकाल डालते हैं। फिर साँचेके ऊपरके भागको हटाकर नीचेके भागको उलट देते हैं। चित्रित ईंटों व इसी प्रकारके अन्य भारी चीजोंको दो क्रमोंमें बनाते हैं। पहले क्रममें ईंटोको किसी तारसे उपयुक्त कदमें करते हैं और फिर दूसरे क्रममें प्रत्येक भागको भिन्न-भिन्न नमूनोंके ठप्पेमें रखकर प्रेसमें दबाते हैं।

जो प्रेस इस कामके लिये प्रयुक्त होते हैं वे पिलर प्रेस व स्क्रू प्रेस होते हैं। इसमें ठप्पे इस्पात वा ढालवां लोहेके होते हैं। चूंकि इन ठप्पोंपर बहुत दबाव पड़ता है उन्हें मजबूत होना बहुत जरूरी है। इस प्रेसमें केवल दबानेसे बरतनोंपर काट-छांट करके अनेक पेचीले

पदार्थ बनाये जा सकते हैं। अतः इस्पात था ढालवां लोहेके ठप्पेसे ही यह कार्य अधिक सुविधासे हो सकता है।

(५) ढालना

यह वह कार्य है जिससे प्लास्टरके साँचेमें द्रव मिट्टी-की लेई डालकर किसी विशेष आकारके मिट्टीके बरतन बनाये जाते हैं। मिट्टीकी लेई डालनेके कुछ समयके बाद आवश्यकतासे अधिक मिट्टीकी लेईको सॉचेसे ढालकर निकाल लेते हैं। सॉचेके भीतरका भाग मिट्टीसे जम जाता है क्योंकि इस लेईका कुछ जल सांचा सोख लेता है। इस मिट्टीकी परतको कुछ समयके लिये साँचेमें छोड़ देते हैं ताकि वह पर्याप्त कठोर हो जाय। इसमें वह बरतन साँचेका रूप धारण कर लेता है। अब उसे साँचेसे बाहर निकाल लेते हैं। इस ढालनेमें किसी विशेष चतुर कुम्हारको जरूरत नहीं होती। पतलीसी लेई भी इसमें सुविधासे प्रयुक्त हो सकती है। ढलवें बरतन अधिक हलके और कम मजबूत होते हैं पर ये अधिक रन्ध्रमय होते हैं। ढलवें बरतन अधिक सिकुड़ते हैं और पकानेपर इनका वजन अधिक कम हो जाता है पर ढलाईसे अनेक विचित्र प्रकारके बरतन अधिक सुगमतासे बनाये जा सकते हैं ऐसे बरतनोको अन्य विधियोंसे बनानेमें असम्भव नहीं तो कठिनता बहुत ही

अधिक होगी। पर ढलाईमें अनेक साँचोंकी जरूरत पड़ती है और ये साँचे बहुत समय तक टिकते नहीं हैं।

कितने समय तक साँचोंमें मिट्टीकी लेई रहनी चाहिये यह बहुत कुछ मिट्टीकी नम्रता, साँचोकी शोषण-शक्ति और बरतनोंकी मोटाईपर निर्भर करता है। यह समय कम किया जा सकता है विशेषतः बहुत मोटी और भारी ढलाईके लिये यदि साँचेको एक वायुरोधक बरतनमें रखकर साँचेकी चारो ओरकी वायुको निकाल डालें व साँचेके अन्दर वायुका दबाव डालें।

यदि एकसे अधिक प्रकारकी मिट्टीको साँचेमें ढालना हो तो पहले रंगीन मिट्टीको ब्रुशसे साँचेमें लगाकर तब साधारण मिट्टीकी लेईको साँचेमें डालते हैं।

मिट्टीकी लेईमें क्षारीय लवणोंके डालनेसे लेई अधिक पतली हो जाती है और उसमें मिट्टीके छोटे-छोटे कण छितरे रहते हैं। अम्लों व आम्लिक लवणोंसे लेई मोटी हो जाती है। जिस लेईमें क्षारीय लवण डाले जाते हैं वह लेई बहुत धीरे-धीरे जमती है। लेईका बहाव तापक्रम, आर्द्रता और लेईके पतलेपनपर बहुत कुछ निर्भर करता है। सैन्धककर्बनेट (सोडियम कार्बोनेट) की अपेक्षा सैन्धक शैलेत (सोडियम सिलिकेट) और दाहक सोडासे लेईका पृष्ठ-तनाव बढ़ जाता है। द्रूसे साँचेमें

वायुकी छोटी-छोटी बूंदें या बुलबुले रह सकते हैं जिससे बरतन खराब हो सकते हैं।

केवल सोडियम कार्बोनेटके प्रयोगसे लेई शर्वतके सदृश गाढ़ी हो जाती है। इससे सोडियम कार्बोनेट और सोडियम सिलिकेटके मिश्रण ही अधिक उपयोगी है।

जब मिट्टीमें पानी मिलाकर मथा जाता है तब पहले कुछ घन्टोमें बड़े महत्वके परिवर्तन होते हैं क्योंकि इस समय भिन्न-भिन्न वस्तुओके बीच क्रियाएं होती हैं। यदि मिट्टीको पूरा न मथा जाय विशेष कर अलकलीके डालने पर तो वह लेई समावयव नहीं होगी और ऐसी लेईसे ढालनेमें कठिनाइयां होंगी। यदि यह लेई अधिक काल तक वायुमें खुली रहे तो वायुसे कर्बन द्विओषिद शोषित कर उसके ऊपर पपड़ी बनेगी जिसे तोड़ कर मिलानेसे बरतनोपर एक प्रकारके कुछ बादामी रंगके दाग पड़ जाते हैं।

(६) अन्तिम तैयारी

बरतनोंको भट्टीमें पकानेके पहले कुछ और क्रियाओंके करनेकी ज़रूरत पड़ती है। उनमें दो प्रमुख हैं। पहला यदि बरतनोंके भिन्न-भिन्न भाग अलग बने हैं तो उनको मिलाकर इकट्ठा करना। और दूसरे यदि उनके आकारमें कोई त्रुटि है तो उसे दूर करना और बरतनोंकी सफाई करना।

यदि किसी सामानके भिन्न-भिन्न भाग अलग बने हैं तो उन भागोंको उसी लेईसे जोड़ते हैं जिस लेईसे वे भाग बने हैं। भागोंकी जोड़ाई उसी अवस्थामें होनी चाहिये जब वे कुछ आर्द्र हों, बिलकुल सूख न गये हो। यदि उन भागोंके सूख जानेपर जोड़ाई होगी तो भट्ठीमें चढ़ानेपर वे चिटक सकते हैं।

बरतनोंके दबाने और ढालनेपर साँचोंके कारण उन पर कुछ निशान वा अन्य त्रुटियां रह सकती हैं। इन त्रुटियोंको एक छोटीसी चाकू वा नहरनीसे हटा देना और फिर स्पजसे पोछ डालना चाहिये। यदि ढालनेमें कुछ गड्ढे व पतले चटक रह गये हो तो उनमें थोड़ी लेई डालकर सुधार लेना चाहिये। तश्तरी व रकाबीको पहले रेत कागजसे और फिर फलालैनसे रगड़कर साफ कर लेना चाहिये।

(७) सुखाना

यह वह क्रिया है जिससे मिट्टीके बरतानोंका पानी भट्ठीमें चढ़ानेके पहले सुखा लेते हैं ताकि बरतनोंके पकानेके काममें शीघ्रता हो। और बरतनोंके चिटकनेका कोई भय न रहे। जो बरतन चूर्णोंको दबाकर बनाये जाते हैं उनको सुखानेकी कोई ज़रूरत नहीं पड़ती, वे सीधे भट्ठेमें पकाये जाते हैं।

कठोर (योन-हार्ड) है ऐसा कहा जाता है। ऐसे बरतन भट्टीमें रखनेके योग्य होते हैं।

३—तीसरे क्रममें कृत्रिम गरमीसे बरतनोंको प्रायः ११०°श० पर गरम करते हैं। इससे उनका सारा जल निकल जाता है। यह वास्तवमें भट्टीमें पकानेका पहला क्रम है। इस क्रममें सिकुडन प्राय नही होती पर बरतन अधिक रन्ध्रमय हो जाते हैं।

चीनी मिट्टीके बरतन मामूली तौरसे जल्दी सूखते हैं। उनमें सिकुडन कम होती है और उनके रन्ध्र बडे-बडे होते है। नम्र मिट्टीके साथ यदि चूना मिला हुआ है तो ऐसी मिट्टी अपेक्षाकृत कम पानी सोखती है। जो मिट्टी अधिक पानी सोखती है उसके बरतनोंमें अधिक सिकुडन होती है और उनके छेदोंके बीचका स्थान अधिक होता है। जिस कच्चे बरतनमें १० प्रतिशत जल रहता है उसमे दैर्घ्य-सिकुडन प्राय एक प्रतिशत होती है। जिसमें २५ प्रतिशत जल रहता है उसमे दैर्घ्य-सिकुडन प्राय १० प्रतिशत तक होती है। ढालवा बरतन जौलीपर बने बरतनोंकी अपेक्षा अधिक सिकुड़ते और रन्ध्रमय होते हैं। हाथसे बने बरतन जिनके पृष्ठके क्षेत्रफल अधिक हैं वे जल्दी सूखते हैं। जिन बरतनोंमें मोटे और पतले दोनो भाग होते हैं उनके पतले भाग मोटे भागकी अपेक्षा ज्यादा जल्दी सूख जाते हैं और इससे मोटे भागमें तनाव पडता है। यह तनाव यदि पर्याप्त

प्रबल है जिसे वे सहन नहीं कर सक्ते तो ये चिटक वा टूट जाते हैं। इस कारण मोटे और पतले भागोंके बीच अकस्मात् परिवर्तन नहीं होना चाहिये। मोटेसे पतले भागोंको धीरे-धीरे पतला करते हुये जोड़ना चाहिये।

सुखानेका समय

बरतनोंके सुखानेमें कितना समय लगना चाहिये यह बहुत कुछ उनकी बनावट, आकार और मोटाईपर निर्भर करता है। चूंकि सूखनेकी क्रियाके प्रथम क्रममें सुखाई बहुत जल्दी होती है इस दशामें बरतनोंको भीगे कपड़ोंसे ढकनेसे लाभ होता है। कभी-कभी सॉंचेको ही बरतनोंके साथ उलट कर रख देते हैं ताकि वे बहुत जल्दीसे न सूख सकें। जल्दीसे सूखनेमें उनके आकारसे विकार उत्पन्न हो सकता है। धीरे-धीरे सूखनेकी अपेक्षा जल्दीसे सूखनेमें सिकुड़न कम होती है। यदि एक ही मिट्टीके दो बरतन बने हों तो जो बरतन २४ घण्टेमें सूख जायगा उसमें सिकुड़न प्राय. ६ प्रतिशत होगी और जो १२ घण्टेमें सूखेगा उसमें सिकुड़न प्राय' ७ प्रतिशत होगी।

आर्द्रता

बरतनोंके सूखनेपर वायुमण्डलकी आर्द्रताका बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है। यदि आर्द्रता कम है अर्थात् वायु सूखी है तो बहुत जल्दी सूख जाते हैं और यदि आर्द्रता

अधिक है तो वे शीघ्र सूखते नही और उन्हे उच्च तापक्रम पर सुखानेकी जरूरत पडती है। अधिक आर्द्र वायुमें बरतन कम समयमें कृत्रिम रूपसे सुखाये जा सकते हैं। सुखानेकी कृत्रिम रीतिका व्यवहार इस दृष्टिसे अच्छा है। कुछ उच्छोपकोंके प्रयोगसे भी जिनमें जल वाष्प दिया जा सकता है सुखानेका समय कम किया जा सकता है। कम समयमे बरतनोंके सूखनेसे चिटकनेकी सम्भावना अधिक होती है।

तापक्रम और वायु

यदि वायु शान्त है तो सूखनेमे अधिक समय लगता है और यदि वायु बहती है तो वे जल्दी सूख जाते हैं। यदि शान्त वायुमे सूखनेका वेग १०० है तो जब वायु घण्टे मे प्राय १ मीलकी चालसे बहती है तो सूखनेका वेग १०९ और यदि घण्टेमें २ मीलकी चालसे बहती है तो ११७ हो जाता है। जिस प्रकार बहती वायुमें वाष्पीभवन अधिक शीघ्रतासे होता है वैसा ही बहती वायुमें मिट्टीके बरतन अधिक शीघ्रतासे सूखते हैं। तापक्रमकी वृद्धिसे सूखनेकी क्रियामें बहुत वृद्धि होती है। तापक्रम १०° की वृद्धिसे सूखनेकी क्रिया प्राय २$\frac{१}{२}$ गुना बढ जाती है। ४०° की वृद्धिसे तो प्राय १० गुना बढ जाती है।

सूखनेकी क्रियापर नमकका असर

नमकसे बरतनोंके सूखनेका वेग कम हो जाता है और

अधिकांश दशाओंमे सिकुडन बढ जाती है। नमकसे बरतनोंके रंग अच्छे होते हैं। सुखाने और पकानेमे जो दिक्कतें होती हैं वे बहुत कुछ २ प्रतिशत वजनमें नमकके रहनेसे कम हो जाती है। इसका कारण यह है कि नमकके कारण मिट्टीका केशाकर्षण बढ जाता है और ज्यो ही पृष्ठका जल सूख जाता है अन्दरसे जल आकर उस स्थानको ले लेता है। सोडियम कार्बोनेटसे सूखनेकी गति कम हो जाती है पर चिटकनेकी सम्भावना बढ जाती है। सोडियम क्लोराइड और सोडियम कार्बोनेटसे पकानेके समय मिट्टीके कॉचीकरण मडल की अवधि बढ जाती है। दूसरे शब्दोंमे निम्न तापक्रमपर ही मिट्टी कॉंच-सी बनना शुरू करती है और जरूरतसे ज्यादा नही पकती।

सुखानेको विधि

भिन्न-भिन्न वस्तुओंके लिये विभिन्न अवस्थाओंमे अलग-अलग विधियां प्रयुक्त होती हैं। जब मिट्टीको केवल धोकर सुखाते है तो उसे खुली भट्ठीपर रखकर कोयलेकी ऑचसे गरम करते है। मिट्टीके सामान बनानेके कारखानेमे बायलरसे निकली गरम गैसोंको भी इस कामके लिये प्रयुक्त करते है। पोरसीलेन, ईंट इत्यादिके कारखाने जहॉ भारी-भारी चीजें बनायी जाती है वहा भट्ठीसे निकले नष्ट ताप-को सुखानेके काममें ला सकते हैं। यह ताप भट्ठीसे बडे-

बडे नलोंके द्वारा लाकर उच्छोषकोंमें प्रयुक्त होता है। भट्ठोंके ऊपर भी बरतनोंको रखकर सुखा सकते हैं। भारत-में कृत्रिम रीतिसे बरतनोंके सुखानेके लिये अनेक मशीनोंमें जरूरत नही पडती क्योंकि सूर्यका प्रकाश ही इसके लिये पर्याप्त होता है। बरसातके दिनोंमें ही कृत्रिम तापकी जरूरत पड सकती है। तब भट्ठीकी बची हुई गरमी बडी सरलतासे काममें लाई जा सकती है।

मैल छाँटना

बरतनोंका मैल छाँटना कुम्हारोंका एक हौवा है। मामूली तौरसे बरतनोंके सुखानेपर उनके पृष्ठपर गन्दे सफेद मैल जम जाते है जो पकानेपर भी नही जाते। कभी-कभी पकानेपर ही ये मैल प्रकट होते है। यह मैल कैलशियम सल्फेटके कारण बनता है कैलशियम सल्फेट जलमें कुछ विलेय होता है। कुछ लवणोंकी उपस्थितिमें इसकी विलेयता और भी बढ जाती है।

कच्चे बरतन जब धीरे-धीरे सूखते हैं—तब उनमे जो विलेयलवण होते हैं वे पृष्ठ पर चले आते हैं और जैसे-जैसे पानी सूखता है वैसे-वैसे वे निक्षिप्त होते जाते हैं। ये निक्षेप उन स्थानोंपर अधिक होते हैं जहा पानी अधिक सूखता है। ये निक्षेप बरतनोंकी अन्तिम तैयारीके समय हटाये जाते है। यदि सूखनेकी गति इतनी तीव्र है कि अन्दरसे उतनी तेज़ीसे पानी नहीं आ सकता

तब अन्दरसे ही पानी सूखता है। उस दशामें बरतनोंके पृष्ठभागपर निक्षेप नहीं होते।

कभी-कभी सुखानेवाली गैसोंसे भी बरतनोंपर मैल जम जाते है। ऐसी गैसोंमें गन्धककी गैसें रहती हैं जो मिट्टीके कैलशियम कार्बोनेटके साथ मिलकर कैलशियम सल्फेट बनती हैं। ये सल्फेट पहले विलेय होते हैं पर पीछे बरतनोंके ऊपर इकट्ठे हो जाते हैं। बरतनोंके सूखने पर तो ये सरलतासे हटाये जा सकते हैं पर एक बार पक जानेपर वे स्थायी बन जाते है और उनपर जब लुक (ग्लेज) फेरा जाता है तब लुक उनपर चढ़ता नहीं, गिर पडता है। भट्ठीमें चढ़ानेपर जब भट्ठी ठंढी रहती है तब जलावनकी राखके क्षारीय लवण बरतनोंके लवणोंके साथ मिलकर मैल बनते हैं। कभी-कभी बरतनोंके पकानेके बाद भी बरतनोंपर मैल बन सकते हैं। ये सफेद, पीले वा हरे रंगके हो सकते है और इस्तेमाल करनेके वर्षों बाद बन सकते हैं। यदि इन बरतनोंके पकानेकी भट्ठीका तापक्रम पर्याप्त ऊँचा नहीं है ताकि मिट्टी अविलेय सिलिकेटोंमें परिणत हो जाय तो मिट्टीके लवण—सोडियम, पोटाशियम, मैगनीशियम और कैलशियमके क्लोराइड, सल्फेट और सिलिकेट—धीरे-धीरे घुलकर वर्षा व आर्द्रवायुके कारण पृष्ठभाग पर चले आते हैं और मैल बनते हैं। वेनेडियम लवणोंके कारण पीले

और हरे मैल बनते है। ईंटोमें जो पीले मैल बनते हैं वे वेनेडिक-अम्लके कारण बनते है। कोयलेकी धूलोंके कारण वेनेडिक-अम्ल वेनेडिक-आक्साइडमें परिणत हो जाता है जिससे यह मैल कुछ नीलापन लिये हुये हरे गका होता है।

इस मैल बननेको रोकनेके लिये कुछ चीजें मिट्टीमें मिलाई जा सकती हैं। इस कामके लिये बेरियम कार्बोनेट वा बेरियम क्लोराइड या दोनो प्रयुक्त होते है। इससे कैलशियम सल्फेट मिट्टीमे नही रहता। वह कैलशियम कार्बोनेट वा क्लोराइडमे परिणत हो जाता है। इससे मैल बननेकी सम्भावना नही रहती। इस कामके लिये अवक्षिप्त बेरियम कार्बोनेट ही अच्छा होता है। प्राकृतिक बेरियम कार्बोनेट उतना अच्छा कार्य नही करता। बेरियम क्लोराइड जलमें विलेय होनेके कारण शीघ्र कार्य करता है। जब थोडा बेरियमसे काम चल जाय तो बेरियम क्लोराइड ही प्रयुक्त करना चाहिये। एक जर्मन पेटेंटमें इस कामके लिये एक कार्बनिक पदार्थ प्रयुक्त होता है। इस पदार्थसे आच्छादित बरतनके पकानेपर यह जल जाता है और कैलशियम सल्फेटके साथ रासायनिक क्रिया होकर वह ऐसे पदार्थमें परिणत हो जाता है जो आपसे - गर पड़ता है।

छठा अध्याय

बर्तनोंपर लुक फेरना और रंग चढ़ाना

मिट्टीके बर्तनों पर कांच ऐसे पदार्थोंका लेप चढ़ाया जाता है जिससे उनमें जल प्रविष्ट न कर सके और उनमें सुन्दरता भी आ जाय। इन लेप वाले पदार्थोंको लुक कहते हैं। ये कांचसे इस बातमे भिन्न होते हैं कि इनमें केवल सिलिकेट नहीं होते और इनसें अलुमिनाका अंश भी विभिन्न होता है। वास्तविक कांचकी अपेक्षा इन लुकोंमें गालनकी अवधि भी भिन्न भिन्न होती है। लुक वास्तवमें ऐसा होना चाहिये कि बर्तनकी मिट्टीके साथ कुछ न कुछ रसायनिक रीतिमे संयुक्त हो सके ताकि वह उनसे हटाया जा न सके।

कांच के सदृश लुक अमणिभीय होता है। यह और क्षार पार्थिवक्षार धातुओंके सिलिकेट वा बोरेटका बना हुआ होता है। यह अतिशीतल द्रव होता है। इनमें रासायनिक यौगिकों के विशिष्ट गुण नहीं होते। इनका संगठन वा विश्लेषण परिणाम असली क्षार, पार्थिवक्षार वा अन्य धातुओं के द्विबन्धक ऑक्साइडके रूपमें प्रदर्शित किया जाता है। ऑक्साइडके रूपमें लिखनेसे

अधिक सुविधा होती है और इनके गुणों पर विरोध हो सकता है। इन लुकोंमें कुछ वस्तुयें ऐसी डाली जाती हैं, जो उनकी पारदर्शिकताको नष्ट कर उन्हें अपारदर्शक बनावें। ऐसे पदार्थ वङ्ग, यशद और अलुमिनियमके ऑक्साइड और कैलशियम फासफेट वा हड्डीके भस्म हैं। लुक ऐसा होना चाहिये कि सूखने पर घूने न और झाड़नेसे गिर न पड़े।

लुकके अवयवों को पीसनेके समय सोहागा वा धातुओंके लवण सदृश वस्तुएँ पानीमें घुलने से निकल न जायँ इससे इन विलेय पदार्थोंको सिलिका, चूना वा लेड आक्साइडके साथ मिलाकर आग पर पिघला कर अविलेय बना लेते हैं। इस प्रकार पिघला कर कांच सदृश बनानेकी क्रिया को 'फ्रिटीकरण' कहते हैं और द्रवित ढेरको "फ्रिट"। इस फ्रिटमें फिर अन्य अविलेय पदार्थों को मिला कर जलके साथ पीसते हैं। इस फ्रिटीकरणके द्वारा लुकके मिश्रणोंके बनानेमें अनेक लाभ हैं।

(१) लुकके अनेक अवयवोंके घनत्वकी विभिन्नता बहुत कुछ घट जाती है जिससे कुछ अवयवोंके नीचे तलमें बैठ जानेकी सम्भावना कम हो जाती है।

(२) इससे कार्बन डायक्साइड तथा अन्य गैसे निकल जाती हैं। लुकके भट्ठीमें पकानेका कार्य बहुत कुछ कम हो जाता है।

(३) अम्लोंमे लुककी विलेयता न्यून हो जाती है। सीसाके विषैले होनेकी सम्भावना भी बहुत कुछ घट जाती है।

(४) विलेय पदार्थ अविलेय बन जाते हैं।

लुकके मिश्रण यदि मात्रा में कम हैं तो अग्निजित् मिट्टीकी घरियोंमें रखकर विशेष भट्ठीमें उन्हे गरमकर फ्रिटीकरण करते हैं। जब वे पिघल जाते हैं तो जलमें उन्हे ढालदेते हैं। इससे वे टूट जाते हैं और तब पीसनेमें सुविधा होती है। यदि बड़ी मात्रामे तैयार करना होता है तब उन्हे परावर्त्तन भट्ठीमे ऐसा करते हैं। इस भट्ठीमें कोयले वा तैलसे भट्ठी गरमकी जाती है। इस मिश्रणके रखनेसे पहले भट्ठीको गरम कर लेते हैं और पिघलने पर उसे लकड़ीसे चलाते रहते हैं ताकि खूब मिलकर वह बिलकुल समावयव बन जाय। भट्ठी एकसी गरम रहनी चाहिये और यदि फ्रिट में सीसा (धातु) है तो उसे सधूम वा अवकारक वातावरणमें नहीं गरम करना चाहिये नहीं तो सीसाका आक्साइड अवकृत हो वाष्प बनकर उड़ जा सकता है। पिघल जाने पर उसे बहुत देर तक गरम भी न करना चाहिये, नहीं तो उसकी क्षार धातुयें नष्ट हो सकती हैं।

जिस कठोर लुकमें विलेय चीजें नहीं होतीं वे इस प्रकार पिघलाई नहीं जातीं। उन्हें खूब महीन पीसते

हैं ताकि वे २०० मेशवाली चलनीमें बिलकुल छन जायें। थोड़ी मात्रामे यह पीसना "पौट मिलमें" होता है। ये पौट मिल कठोर पोरसीलेनके बने होते है। बडी मात्रामें पीसना 'बौल मिल' में होता है। लुकको पीस लेनेके बाद उसे विद्युत-चुम्बकमें ले जाते हैं ताकि लोहेके टुकड़े उससे अलग हो जायँ। यदि सफेद रंगकी आवश्यकता है तो उसमें बहुत थोडा हल्का नीला रंग डालते है। इस्तेमाल करनेके पहले कम से कम दो सप्ताह उसे छोड रखते हैं। इससे उसके गुण बहुत कुछ बढ जाते हैं। इसे रखनेके लिये काठके कठौते काममे लाते हैं। इन कठौतोंमें मिलानेके लिये मजबूत क्षोभक लगे रहते हैं ताकि कठौतेके पेंदेमें लुक बैठ न जाय। कभी कभी थोडा अम्ल व गोरा भी कठौतेमें डाल देते हैं।

बरतनोंपर लुक कैसे फेरा जाता है यह बहुत कुछ उनकी बनावटपर निर्भर रहता है। अनेक विधियोंमे लुक फेरा जाता है जिनमें निम्नलिखित मुख्य हैं।

डुबाना—जल्दी और एकसा लुक फेरनेका तरीका बर्तनोंको लुकमे डुबाना है। कुछ पके हुये बर्तनों पर ही ऐसे लुक फेरा जाता है। यदि बर्तन पके हुये नहीं हैं तो उन्हे ऐसा मजबूत होना चाहिये कि लुकके द्रवमे भिगानेपर वे अपने आकारको कायम रख सके। लुकके चढ़नेकी मोटाई, बर्तनकी सूपिरता, डुबाकर रखनेके समय

और लुकके घनत्वपर निर्भर रहती है। डुवानेवाले लुकमें कुछ नर्म मिट्टी वा इसी प्रकारके अन्य पदार्थ मिला देना चाहिये ताकि लुकके सूखनेपर उसमे बांधनेकी शक्ति आजाय। लुकको जब पिघलाते हैं तब कुछ मिट्टी अलग रख लेते है और पीसनेके समय उसमें मिलाकर पीसते हैं। इस कामके लिये कभी कभी बबूलका गोंद व डेक्स्ट्रीन इस्तेमाल करते है।

ढालना—जब बर्तनोंके एक तरफ ही लुक फेरना होता है तब उसपर लुक ढालते है। खोखले बर्तनोंके अन्दर यदि लुक फेरना होता है तब द्रव लुकको उस बर्तनमें भर देते हैं और फिर कुछ समयके वाद लुक ढाल लेते हैं। टाइलपर जब लुक फेरना होता है तब अविरत धारामे गिरते हुये द्रव लुकपर शीघ्रतासे उसे ले जाते हैं। इससे उसके पृष्ठ भागपर लुकका एक पतला लेप चढ़ जाता है।

छिड़कना—कुछ बरतनोंपर छीटेके रूपमें यंत्रोंसे लुक फेरा जाता है। जो चित्र यंत्र इस कामके लिये प्रयुक्त होते है उन्हे "स्प्रेयर" वा "ऐरोग्राफ" कहते हैं। यह यंत्र दबावसे भरी वायुसे जढ़ा रहता है। लुकके द्रवमें कुछ बबूलका गोंद मिला देते हैं ताकि वह मलाई सा गाढ़ा हो जाय। बड़े-बड़े कच्चे बरतनोंपर जो डुबाये नहीं जा सकते, लुक फेरनेके लिये यह विधि बड़ी उपयोगी है।

धुरियाना—भीगे बर्तनेपर लुकके महीन चूर्णके भुर भुरानेसे लुक बरतनोंपर सट जाता है। यह विधि घटिया बरतनोंके लिये ही प्रयुक्त होती है। कभी-कभी यह विधि पकाये हुये बर्तनोंको सवारनेके लिये भी प्रयुक्त होती है। ऐसी दशामें ऐसे बर्तनोंको पहले किसी चिपचिपे पदार्थ-में डुबाकर तब उसपर लुकके चूर्णको सावधानीसे भुर-भुरा देते हैं। यह चिपचिपा पदार्थ गोंद व राल होता है जो भट्टीमें पकानेपर जल जाता है और उससे लुकपर कोई असर नहीं पडता।

लेपना—सुन्दर चित्रित बर्तनोंपर जिनपर अनेक रंगोंका लुक फेरना होता है, ब्रुशके द्वारा लुकमें थोडा सरेस व जिलेटिन मिलाकर गाढ़ा बना लेते हैं।

भाप बनाकर लुक फेरना—कभी कभी लुकको भट्टीमें गरम करते हैं। इससे लुक भट्टीकी आंचसे भाप बन कर उडता है और बर्तनोंपर जाकर बैठ जाता है।

लुक क्या है ?

लुकमें निम्न लिखित चीजें रहती है।

अलुमिना—यह चीनी मिट्टी, फेल्स्पार, चीनी पत्थर और फूँका हुआ फिटकरीके रूपसे प्रयुक्त होता है। इससे लुकोंका द्रवणाङ्क (तापक्रम जिसपर वह द्रवित होता है) घट जाता है। इससे कांच्य-हीनता रुकनी है और लुकोंपर

वायुमण्डलका प्रभाव कम पड़ता है। अलुमिनाके अधिक रहनेसे सूखनेपर लुकके चिटकनेकी सम्भावना रहती है। इससे भट्ठीपर चढ़ानेमें लुकके इकट्ठा होनेकी भी सम्भावना रहती है। लुकमे इससे महीन सूराख भी बन सकते हैं। लुकमें जितनी सिलिका (रेत) हो सके उसके दसवें हिस्सेसे अधिक अलुमिना न रहनी चाहिये। अधिक रहनेसे चमक कम हो जाती है और वह इनेमल सा देख पड़ता है।

सिलिका—यह स्फटिक, चकमक पत्थर, बालू, चीनी मिट्टी, पत्थर और फेल्स्पारके रूपमें इस्तेमाल होता है। यह क्षारोंके साथ उच्च तापक्रमपर संयुक्त हो गालनीय पदार्थ बनता है। इससे लुक कम गालनीय और शीघ्र न बहने वाला होता है। सूषिर वर्तनोंपर यह शीघ्र सोख जाता है। अधिक सिलिकाके होनेसे पकानेपर चिटकनेकी सम्भावना कम हो जाती है। यदि सिलिका का अंश अधिक है तो लुक काँच-हीन होना शुरू होता है। इस क्रियामें सिलिसिक अम्ल अलग हो जाता है जिससे उसकी चमक नष्ट हो जाती है।

बोरिक आक्साइड—यह बोरैक्स (सोहागा), बोरोकैल्साइट, बोरेसाइट व बोरिक अम्लके रूपमें लुकमें डाला जाता है। सिलिकाके सदृश यह भी क्षारोंके साथ

संयुक्त हो कांच सा पदार्थ बनता है। क्षारोंके साथ जो यौगिक बनते हैं, वे घोलमें विलेय होते पर अन्य धातुओंके यौगिक अविलेय होते हैं। बोरिक अम्ल और सिलिकाके कांच परस्पर मिश्रणीय होते हैं पर बोरेक्सके कांच शीघ्र पिघलनेवाले होते हैं। इस कारण लुकके द्रवणाङ्कको कम करनेके लिये सिलिकाके साथ-साथ थोडा बोरिक ऑक्साइड भी मिलाते हैं। बोरिक ऑक्साइडसे लुकमें अधिक चमक आ जाती है, पर जल, अम्ल और अलकली लवणोंकी इस पर शीघ्र क्रिया होती है। खुरचनेसे ऐसे लुकपर चिह्न भी पड़ सकता है। यदि सिलिकाकी मात्रासे बोरिक आक्साइडकी मात्रा पांचवे हिस्सेसे अधिक रहे, तो भट्ठीमें पकानेपर बर्तनोंपर दूध सी सफेदी बन सकती है।

अलकली—यह सोडियम और पोटेशियम कार्बोनेट व नाइट्रेटके रूपमें प्रधानतः फेल्सपार, बोरेक्स और पत्थरके साथ प्रयुक्त होता है। इनसे लुक जल्दी पिघलता है। ऐसे लुक पर जलवायुका असर भी जल्दी होता है। जिन लुकोंमें अलकली अधिक रहती है वे बहुत चिटकते हैं।

लेड आक्साइड—यह लिथार्ज, रेड लेड, व्हाइटलेड व गलेना के रूपमें प्रयुक्त होता है। सिलिकाके साथ मिल

कर यह अगालनीय कांच वनती है। इसके होनेसे लुक पर जलवायुका कम प्रभाव पड़ता है; इसमें लुकके अन्य अवयव जल्दी घुल जाते हैं और लुक पर्याप्त पतला होता है। इससे वायुके बुलबुले निकल जाते हैं और लुक
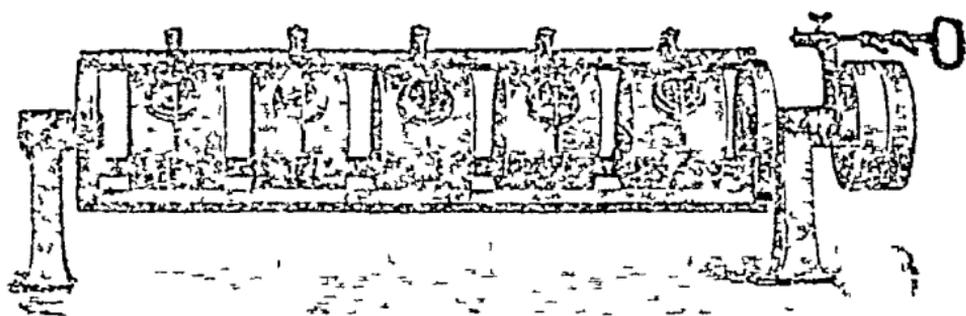
चित्र ८—पौट मिल (पृ० ७६)
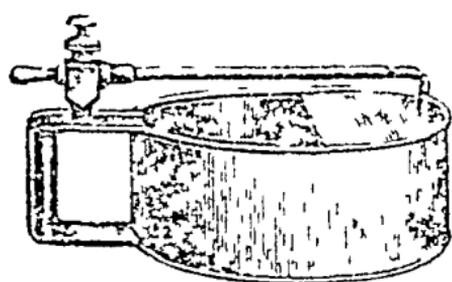
चित्र ९

चमकीला और साफ़ होता है। पर इससे दरारें अधिक फटती हैं। सीसाके लवण पेटके अन्दर जानेपर आमाशय-के रसोंमें घुलते हैं, बाहर नहीं निकलते। धीरे धीरे इनकी मात्रा बढ़ती जाती है और अन्तमें इतनी हो जाती है

कि वे विषका काम करते हैं। इससे सीसाके लवणोंसे सावधान रहना चाहिये और अन्य पदार्थोंके साथ पिघलाकर ही मज़दूरोंके हाथमें देना चाहिये।

कैलशियम आक्साइड व चूनाकली—यह चूना-पत्थर, संगमरमर व बोरो कैलसाइट व डोलोमाइटके रूपमें प्रयुक्त होता है। वह अलकलीके साथ मिलकर युग्मलवण, सिलिकेट और बोरेट बनता है। इससे लुक जल्दी पिघलता है और जो तल बनता है, वह कठिनतासे खुरचा जाता है। इसके लुक दूध-सफ़ेदसे होते हैं, क्योंकि यह विरञ्जनका कार्य करता है। यदि कार्बोनेट प्रयुक्त करना है तो उसे जलाकर कार्बन डायक्साइड निकाल देना चाहिये ताकि वर्तनोंके लुकपर छोटे छोटे छेद न बन जाँय।

मैगनीसिया—यह डोलोमाइट और मैगनीसाइटके रूपमें इस्तेमाल होता है। यह उच्च तापक्रमके लुकमें काम आता है। चूनेके सदृश यह भी लुकको सफ़ेद बना देता है। ज्यादा होनेसे लुकमें लकीरें वा धब्बे पड़ जाते हैं।

बेराइटा—यह बेराइटीज़ व वेदेराइटके रूपमें प्रयुक्त होता है। इससे लुकमें बहुत चमक आ जाती है। यह मामूली तौरसे सीसाके स्थानमें प्रयुक्त होता है।

जिंक आक्साइड, टिन आक्साइड, ज़िरकोनियम आक्साइड और सोडा व पोटाशके अण्टीमोनियेट— जिंक आक्साइड और टिन आक्साइड तो प्रायः सब लुकों-में प्रयुक्त होते हैं। जिंक आक्साइडकी थोड़ी मात्रासे लुकों-की चमक बढ़ती है, पर अधिक ठंडे होनेपर जिंक सिलिकेट मणिभीकृत हो जाता है। इस कारण जिंक आक्साइड मणिभीय लुकोंके निर्माणमे प्रयुक्त होता है।

लुक फेरनेके दोष

जब बर्तनोंपर लुक फेरे जाते है तब उनपर अनेक दोष देख पड़ते है। उनमें प्रधान दोष यह है कि उन बर्तनों पर बहुत बारीक बाल सी दरारें फट जाती हैं। इसका कारण यह है कि बर्तन एक प्रकारकी मिट्टीसे बने होते हैं और लुक दूसरे प्रकारके सामानोंसे। इन दोनों प्रकारकी चीज़ोंपर ताप और शीतका अलग अलग प्रभाव पड़ता है। ताप और शीतसे दोनों भिन्न भिन्न डिगरियोंमें बढ़ते और सिकुड़ते हैं। इस विभिन्न प्रसारसे उनपर तनाव पड़ता है, और वे फट जाते हैं। इस दोषको "चिटकना" कहते हैं। जब सिकुड़न कम होती है तब लुक छोटे छोटे टुकड़ोंमें टूट जाते हैं और बर्तनोंसे अलग भी हो जाते हैं विशेषतः किनारोंपर।

कभी-कभी यह तनाव इतना तीव्र होता है कि बर्तन टूट भी जाते हैं। इस दोषको 'छीलना' कहते हैं।

चिटकनेकी जाँच मामूली तौरसे नमक और शोरेके संपृक्त घोलमें कुछ घण्टों तक जाँचके टुकड़ोंको उबालनेसे करते हैं। ऐसे उबाले हुए टुकड़े ठंडे जलमें यदि बारी-बारीसे पाँच बार डुबाये जाँय और चिटके नहीं तो ऐसा लुक उच्च कोटिका समझा जाता है। एक दूसरा तरीका यह है कि जाँचवाले बर्तनको १५ मिनटोंतक १७५° श० पर बिजलीके चूल्हेमें गरम करते हैं और उसे जल्दीसे प्रायः २०° श०के ठंढे जलमें डुबा देते हैं। यदि इससे उसपर दरारें न पड़ें तो वह उत्तम कोटिका समझा जाता है। यह चिटकना अनेक विधियोंसे रोका जा सकता है। यदि लुकका संगठन नियत है तो बर्तनोंके संगठनको निम्नलिखित रीतिसे परिवर्तित कर चिटकना रोक सकते हैं —

१—मिट्टीके अंशको कम करके उसमें फ्लिटके अंशको बढ़ा देते हैं। रेतके स्थानमें अच्छा जला हुआ फ्लिट चिटकना रोकने के लिये अच्छा होता है। फ्लिट को खूब महीन पीसकर इस्तेमाल करनेसे चिटकना रुकता है।

२—बर्तन बनानेमें चीनी मिट्टीके कुछ अंशके स्थानमें

बौल मिट्टी*का प्रयोग करते हैं। कुछ सीमा तक चूनेसे भी चिटकना रुकता है। बोन चाइना X के बर्तन अन्य बर्तनोंसे कम चिटकते हैं क्योंकि इसमे चूना होता है।

३—फेल्स्पार व द्रावकके कम होनेसे चिटकना कम होता है। अलकली और अलुमिना चिटकनेसे सहायक होते हैं।

४—बहुत समय तक व ऊँचे तापक्रमपर बर्तनोंके पकानेसे चिटकना कम होता है। पर कांचसा और सुपिर बर्तनोंपर उल्टा असर होता है।

५—अग्निजित बर्तनोंमे ग्रोग (इसका वर्णन आगे होगा) के अनुपातकी वृद्धिसे चिटकनेकी सम्भावना कम होती है।

यदि बर्तनोका संगठन नियत है और वह बदला नहीं जा सकता तो लुकके संगठनको निम्नलिखित विधियों-से बदलकर चिटकना रोक सकते है।

१—लुकमें सिलिकाके अंश बढानेसे व कुछ सिलिका-के स्थानमें सोहागाके इस्तेमाल करनेसे।

---

* यह एक विशेष प्रकारकी मिट्टी है जो बहुत महीन और बहुत ही नम्र होनी है।

X बोनचाइना चीनी मिट्टी सफ़ेद खली और हड्डीकी राख डालकर बनाई जाती है।

२—लुकमें चीनी मिट्टी व अलुमिनाका थोडा अंश रखनेसे।

३—ऊँचे अणुभारके द्रावकोंके स्थानमें निम्न अणुभारके द्रावकोंके डालनेसे।

४—लुकको ऊँचे तापक्रम पर व अधिक समय तक पकानेसे।

जो उपाय चिटकना रोकनेके लिये किये जाते हैं ठीक उसका उलटा छीलना रोकनेके लिये किया जाता है।

लुकोंका एक दूसरा दोष 'गोला' बनना है। जब लुक मुलायम होता है तब उस पर दो शक्तियाँ कार्य करती हैं। एक शक्ति लुकको बर्तनोंपर चिपका कर रखती है और दूसरी शक्ति बर्तनोंके किनारेके भागोंमें लुकको धीरे धीरे घसीटकर छोटे-छोटे दाने बनाती है। जब दूसरी शक्ति पहली शक्तिसे अधिक होती है तो लुक-तलपर 'गोला बनने' के दोष होते हैं।

यदि बर्तनोंपर धूल-कण हैं व चर्बीले पदार्थ हैं व कांचसे तल हैं तो पहली शक्ति कम होकर उन पर गोला बनता है। लुकको बहुत महीन पीसनेसे मिट्टीके अधिक रहनेसे व मैगनीशियाके अधिक होनेसे यह दोष पैदा होता है।

लुकोंका एक दूसरा दोष पखोकरन और गन्धकी-

करन है। बर्तनोंपर जो लुक आंशिक रूपसे मणिभीकृत हो जाते हैं उनपर पंखके आकारके चकत्ते पड़ जाते हैं। जिस लुकमें चूना अधिक और अलुमिना कम होता है उसमें प्रधानतः चकत्ते पड़ते हैं। यह चकत्ता कैलशियम सिलिकेटके बननेके कारण पड़ता है। यह हल्के हाइड्रो-क्लोरिक व हाइड्रो-फ्लोरिक अम्लमें जल्दी घुल जाता है। अलुमिनाके कारण ये मणिभ नहीं बनते।

चूनेके सल्फ़ेट भी जो कुछ तो लुकसे और कुछ जलनेवाली गैसोंसे बनते हैं, बर्तनोंके पृष्ठ भागपर पतले आवरण बन सकते हैं और ठंडे होने पर मणिभीकृत हो तलको धुँधले बना देते हैं। अधिक आम्लिक लुकोंमें यह कम विलेय होता है। इससे लुक सिलिकाको घुलाकर अधिक आम्लिक बन जाता है और उसमेंका घुला हुआ सल्फ़ेट लुकसे निकलकर तलपर पतले आवरणका परत बनता है। यदि भट्ठीको वायुको समय समयपर लघ्वीकृत रखें तो सल्फ़ेट जल्दी ही लघ्वीकृत हो उड़ जाता है पर यदि लघ्वीकृत ज्वालामें पर्याप्त ताप न हो तो ऐसा बना हुआ अम्ल लुकमे घुल जाता है और पीछे फूट निकलकर अन्य दोष पैदा करता है।

लुकके बर्तनोंके तलपर कभी-कभी बहुत छोटे-छोटे छेद देखे जाते हैं। ये गैसोंके निकलनेसे बनते हैं और

पिहले हुये लुकोंसे फिर भरते नहीं। कभी-कभी ये साँचों- में ढालनेके समय भी बनते हैं। सफाई करनेके समय हट जाते हैं पर भट्टीमें पकानेके समय फिर निकल आते हैं। कुछ सुराख ऐसे होते हैं जिनके चारों ओर काले धब्बे पड़ जाते हैं। लुकमें व अधपके वर्तनोंमें जो कार्बनिक पदार्थ रहते हैं उनके जलनेसे ये बनते है। यदि बर्तनोंपर लुक फेरनेके पहले उन्हें नम जगहोंपर रखें तो वे गैसों- को सोख लेते हैं और आगमें पकानेपर निकल आते हैं। इससे उनपर छेद बनता है।

एक अच्छे लुकका विश्लेषण परिणाम निम्नलिखित है—

सिलिका	(शैओ$_2$)	४६ २१	प्रतिशत
बोरिक आक्साइड	(टं$_2$ओ$_3$)	७ ०९	”
अलुमिना	(स्फ$_2$ ओ$_3$)	७ ६३	”
लेड आक्साइड	(सी ओ)	२३. २७	”
सोडियम आक्साइड	(सै$_2$ ओ)	६. २८	”
पौटैशियम आक्साइड	(पां$_2$ ओ)	९. ५२	”

उपर्युक्त वस्तुएँ वास्तवमे आक्साइडके रूपमें लुकमें नहीं रहती। ये ऊपर लिखे लवणोंके रूपमे रहती हैं पर इनका विश्लेषण परिणाम आक्साइडके रूपमें ही दिया जाता है।

रंग

मिट्टीके बर्तनोंके रंगोंके दो प्रमुख विभाग हैं।

एक, वे रंग जो उच्च तापक्रमको सहनकर सकते हैं और इस कारण उच्च तापक्रमपर प्रयुक्त होते हैं और दूसरे, वे जो निम्न तापक्रमपर ही प्रयुक्त होते हैं। पहले प्रकारके रंगोंको लुक रंग कहते है। दूसरे प्रकारके रंगोंको "इनेमल" रंग कहते हैं। कार्बनिक रंग इस कामके लिये प्रयुक्त नहीं हो सकते क्योंकि भट्ठीमे वे शीघ्र ही जल जाते हैं।

लुक रंग

इन रंगोंके दो भाग है। एक वास्तविक रंग और दूसरे द्रावक। रंग और वर्तनोंके वीच द्रावक मध्यस्थ मण्डलका काम करता है। द्रावकसे वर्तनों की मिट्टी और रंगों के वीच घनिष्ट संबंध स्थापित होता है। टूटे हुये बर्तनोंको पीसकर द्रावक बनाते हैं। निम्नलिखित वस्तुओं-को आँचमें फूँक कर भी अच्छा द्रावक बना सकते हैं।

स्फटिक ४५ भाग
फेल्स्पार ३० ,,
चीनी मिट्टी २० ,,
सफेदा ५ ,,

इनेमल रंग भी वास्तविक रङ्ग और द्रावकसे बने होते

हैं। पर इनका द्रावक कोमल कांच वाले पदार्थोंका बना होता है। इस कोमल कांचसे संवृत भट्टीके निम्नताप-क्रम पर ही रङ्ग पिघल जाता है। इस द्रावकका कुछ अंश कोमल लुकमें प्रविष्टकर रङ्गके साथ घनिष्ट रूपसे मिल जाता है। द्रावकके नीचे लिखे दो नुसखे अच्छे है।

द्रावक क	द्रावक ख
रेड लेड ३ भाग	रेडलेड ३ भाग
सोहागा २ ,,	सिलिका १ ,,
सिलिका १ ,,	

इन्हें गरम कर, पीस कर तैयार रक्खा जाता है।

रंगोका तैयार करना

आम तौरसे रङ्गको एक छोटी संवृत्त भट्टीमे गरमकर तैयार करते हैं। पर जो कारखाने इसके लिये अलग भट्ठी नहीं रख सकते वे उसी भट्ठीमें जिसमें वे बर्तनोंको तैयार करते हैं, रङ्गोंको भी पकाते हैं। इन रङ्गोंको वे दु:गालनीय मिट्टीके सन्दूकमें रखकर भट्टीके एक कोनेमें रख देते हैं। पर ऐसी दशामें कुछ कठिनताएँ होती है। क्रोम-हरा व ताम्रलालके सदृश कुछ रङ्ग ऐसे हैं जिनके लिये लध्वीकरण वातावरण चाहिये और कुछ रङ्ग ऐसे हैं जिनके लिये आक्सीकरण वातावरण चाहिये। ये दोनों वातावरण एक भट्टीमें नहीं प्राप्त हो सकते।

इस प्रकार भट्ठीमें पकाये हुये रङ्गोंको छोटे-छोटे टुकड़ों-में तोड़कर महीन पीसते हैं। यह इतना महीन होना चाहिये कि २४० मेशकी चलनीमें छन जाय। पीसनेके बाद उन्हें स्वच्छ जलसे पूरा धो डालते हैं। यह दोनों प्रकारके—लुक और इनेमल—रङ्गोंके लिये इस्तेमाल हो सकता है। केवल द्रावकोंके विभिन्न मात्राओंमें मिलानेकी ज़रूरत पड़ती है। लुक रङ्गोंके-लिये द्रावकके साथ मिला-कर फिर आगमें फूँकनेसे अच्छा होता है।

रंग चढ़ाना

रंगोंके चढ़ानेके-लिये ब्रश (तुलिका) सर्वोत्कृष्ट साधन है, यद्यपि और भी अनेक विधियाँ हैं जिनसे रंग चढ़ाया जा सकता है। ब्रुशसे रंग चढ़ानेके लिये कोई ऐसा द्रव प्रयुक्त करनेकी जरूरत पड़ती है जिसमें रंगोंके बाँधनेकी शक्ति हो। द्रवके सूख जानेपर रंग दृढ़तासे वर्तनों पर चिपक जाता है। आमतौरसे जो द्रव इस कामके लिये प्रयुक्त होता है उसे 'चर्बी तेल' कहते हैं, यद्यपि इसमें चर्बी बिलकुल नहीं होती। दो भाग रजन-को ७ भाग तारपीनके तेलसे मिलाकर वाष्प-उष्मक पर गरम करनेसे इसे बनाते हैं; अथवा १०० भाग तार-पीनके तेलमें एक भाग उबाला हुआ अलसीका तेल मिलाकर इसे तैयार करते हैं।

इनेमलके बर्तनोंपर रङ्ग चढ़ानेके लिये 'नीडल स्प्रेयर' भी अधिकतासे काममें लाते हैं। २० से ३० पाउण्ड फ़ी इंचकी वायुके दबावमें इसे इस्तेमाल करते है। रङ्गमें थोडा तारपीन व चर्बीका तेल मिला लेते हैं ताकि वह पर्याप्त पतला हो जाय।

जब अनेक बर्तनोंपर एकही प्रकारके चित्रका रंग चढ़ाना होता है तब 'क्रोम-लिथोग्रफिक" छपाईसे ऐसा करते हैं। इस विधिमें चित्रको एक विशेष विधिसे कागजों पर छापकर उसे तैयार रखते हैं। बडी सरल विधिसे इस चित्रको लुक फेरे हुये बर्तनोंपर हस्तान्तरित करते हैं। ऐसे चित्रवाले कागजोंपर गोंद लगा रहता है। एक मिनट तक इन्हे पानीमे डुबाकर सावधानीसे बर्तनोंपर ऐसे रखते हैं कि चित्रका मुख बरतनकी ओर रहे। तब इसे स्पंजसे धीरे धीरे रगडते है ताकि कागज उसपरसे छूट जाय और रङ्गीन चित्र बर्तनोपर बैठ जाय। बर्तनोंको फिर संवृत्त भट्टीमे फूँकते है। इससे वह चित्र पक्का हो जाता है।

किस आक्साइडसे कौन रंग बनता है यह निम्न-लिखित सारिणीसे पता लगेगा।

आक्साइड	रंग
कोबाल्ट आक्साइड	आस्मानी
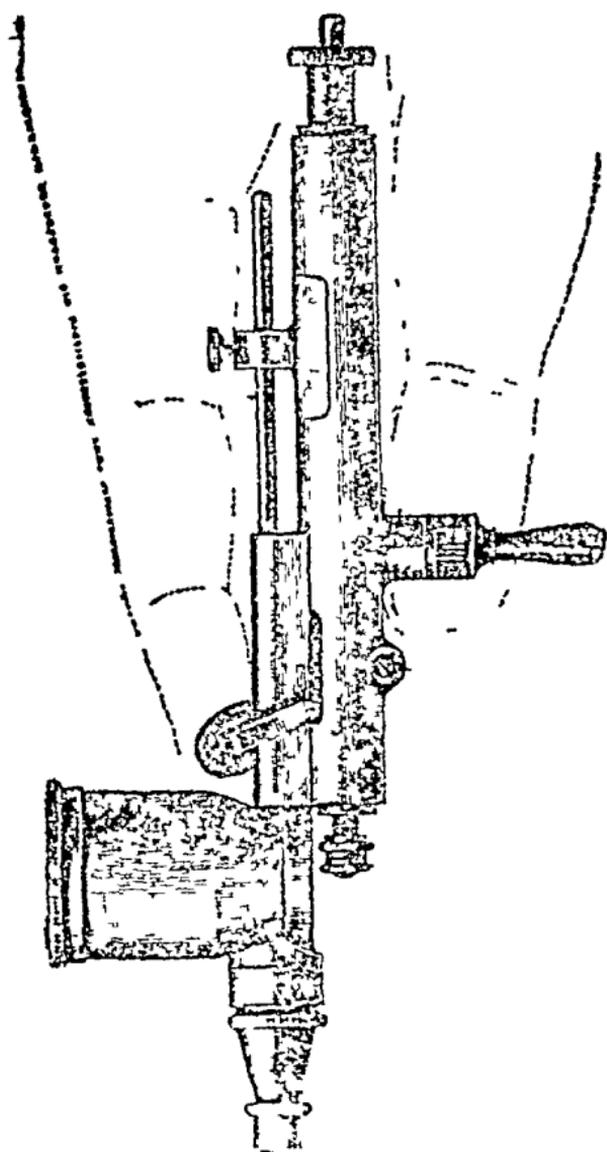
चित्र १०—नोज़ल स्प्रेयर

इस द्रवमें रंगको खूब मिलाकर बर्तनोंपर लगाने-से रंग बड़ी सुगमतासे चढ़ जाता है। तारपीनका तेल जल्द उड़ जाता है और अलसीका तेल वा रजन रह जाता है जो बर्तनोंपर रंगको पकड़े रहता है। मिट्टी व

कौपर आक्साइड	आस्मानी और हरा
फेरिक आक्साइड	आस्मानी, हरा और पीला
मैंगनीज़ डायक्साइड	बैगनी, बादामी और पीला
युरेनियम आक्साइड	पीला और नारंगी
क्रोमियम आक्साइड	पीला और हरा

कोबाल्ट आक्साइड

जितने आस्मानी रंग मिट्टीके बर्तनोंपर देखे जाते हैं उन सबमें कोबाल्ट आक्साइड अकेले वा अन्य आक्साइडों-के साथ मिला हुआ रहता है। विभिन्न अवयवोंके उपयुक्त अनुपातमें लेनेसे अनेक आभाएँ गाढ़ीसे हल्की तक प्राप्त हो सकती है। आमतौरसे कोबाल्ट आक्साइडके रूपमें इस्तेमाल होता है पर कार्बोनेट और फ़ास्फ़ेटके रूपमें भी यह प्रयुक्त हो सकता है। कोबाल्टसे बने रग दो प्रकारके होते हैं। एक अलुमिनेट व मैटब्लू और दूसरा सिलिकेट व ग्लाइटब्लू। कोबाल्टके लिये अलुमिनासे सिलिका अच्छा होता है क्योंकि सिलिका का रंग आसानीसे बनता है और उच्च तापक्रम पर स्थायी होता है, पर अलुमिनाका रंग उच्च तापक्रम पर अस्थायी होता है और सिलिकाके रंगमे परिणत हो जाता है।

कोबाल्ट आक्साइड	२० भाग
अलुमिना	६० भाग

ज़िंक आक्साइड २० भाग

इनको मिलाकर ३ व ४ सेगर कोन तक फूंकने और तब जले हुये ढेरको पीसने और धोनेसे स्टैण्डर्डब्लू तैयार होता है।

कोबाल्ट आक्साइड ५ भाग, अलुमिना १० भाग और जिक आक्साइड ५ भागको फूँक कर पीसने और धोनेसे हल्का आस्मानी रंग (लाइटब्लू) तैयार होता है। इस कामके लिये पोटाश और अमोनिया ऐलमको भट्टी में जलाकर धोनेसे पोटैशियम सल्फ़ेट घुलकर निकल जाता है और अलमिना रह जाता है। चमकीले आस्मानी रंग-को अन्य नामोंसे भी पुकारते हैं। इन्हें आल्ट्रामैरिन, मजे-रिन, विलो, कैण्टन इत्यादि भी कहते हैं। कोबाल्ट आक्सा-इड ६८ भाग, फ्लिट १५ भाग, फेल्सपार १३ भाग और सफ़ेद खली ४ भागको ६ कोन तक गरम करनेसे ब्लू रंग 'स्टैण्डर्डब्लू, प्राप्त होता है। "रायलब्लू" के लिये कोवाल्ट आक्साइड ४० भाग और द्रावक-क १० भाग-को गरम करना पड़ता है। ये रंग सीस लुकके लिये बड़े उपयुक्त हैं, पर जिस लुकमें चूना अधिक रहता है उसके लिये उपयुक्त नहीं, क्योंकि चूनेके सिलिकेट बननेसे मणि-भीकरणके कारण उनमें दुधापन आ जाता है। इस दोष-

-को दूर करनेके लिये सफ़ेद खलीके स्थानमें अलुमिना इस्तेमाल होता है।

बर्तनोंके मिट्टीके रंग

कभी-कभी जिस मिट्टीसे बर्तन बनाते हैं उस मिट्टी-में ही रंग मिला देते हैं। यदि किसी बर्तनको दूध सा सफ़ेद बनाना होता है तो उसमें थोडा आस्मानी रंग मिला देते हैं। इसके लिये थोडा कोबाल्ट आक्साइड पर्याप्त है। इतने थोड़े आक्साइडको मिट्टीके बड़े ढेरके साथ एकसा मिलाना कठिन होता है। इस कारण आक्सा-इडमें कुछ फ्लिंट और पत्थर भी मिला देते हैं ताकि उसके रँगनेकी शक्ति कम हो जाय और बर्तनोंपर आस्मानी रंगके धब्बे न पड़ें। इस कामके लिये विलेय कोबाल्टके लवण भी प्रयुक्त होते हैं और मिट्टीके ढेरमें अमोनियाके द्वारा अवक्षिप्त कर लिये जाते हैं। मिट्टीमें मिलानेके रंग का एक अच्छा नुसखा यह है।

कोबाल्ट आक्साइड	२५ भाग
फ्लिंट व स्फटिक	१२ भाग
फेल्स्पार	८ ,,
चीनी मिट्टी	५ ,,

इन्हें पीस और धोकर २०० छेदवाली चलनीमें चाल डालते हैं। इसका ०.१ से ०.३ प्रतिशत पर्याप्त होता है।

कौपर आक्साइड

कौपर आक्साइडसे भिन्न-भिन्न लुकोंमें भिन्न-भिन्न रंग बनते हैं। साधारण लुकोंमें इससे हरा रङ्ग बनता है। द्रावकके साथ १००० ° श० के नीचे ही गरम करनेसे यह तैयार होता है। ऊँचे तापक्रमपर यह वाष्पीभूत हो जाता है। अतः इनेमल रङ्गके लिये ही यह उपयुक्त है। कौपर आक्साइड १० भाग, फिलट २५ भाग, रेड लेड ६० और सोहागा ५ मिलाकर फूँकनेसे अच्छा इनेमल रङ्ग बनता है। अधिक अलकलीवाले लुकोंमें तांबेसे बहुत सुन्दर आसमानी रंग प्राप्त होता है। इसे टुरकोयज़-ब्लू कहते हैं। इस रंगको हरा कौपर सिलिकेटमें परिणत होनेकी सम्भावना रहती है। वायुमण्डलके वाष्पसे यह रङ्ग नष्ट हो सकता है। इसका एक बहुत सुन्दर रंग निम्नलिखित पदार्थोंको मिलाकर फूँकनेसे बनता है।

बालू वा फिलट	४७·१४ भाग
लाल-सीस	२२·५८ ,,
सोडियम नाइट्रेट	१२·८० ,,
पोटेशियम नाइट्रेट	१२·६६ ,,
कौपर आक्साइड	४·७१ ,,

लघ्वीकरण वायुमें तांबेसे ल रङ्ग प्राप्त होता है। यह लाल रङ्ग दो आभाओंका हो ।। है। इन दोनों आभाओं-

का बनना ज़रा कठिन होता है पर नीचे लिखे नुसखोंसे सुन्दर तांबेका रङ्ग प्राप्त हो सकता है।

	अरबी चमक	इटेलियन चमक
कौपर सल्फ़ाइड	२६.८७ भाग	२४.७४ भाग
सिल्वर सल्फ़ाइड	१.१५ ,,	१.०३ ,,
पारा	—	२४.७४ ,,
लाल मिट्टी	७१.९८ ,,	४९.४९ ,,

इन सब वस्तुओंको ट्रागाकान्थ गोंदमें मिलाकर ब्रुश से सावधानीसे बर्तनोंपर लेपते हैं। इन बर्तनोंको तब सुखाकर संवृत्त भट्ठीकी प्रबल लध्वीकरण वायुमें पकाते हैं। तापक्रम इतना होना चाहिये कि लाल मिट्टी लुकसे चिपक जाय। यदि भट्ठीका तापक्रम बहुत ऊँचा हो तो उसमें कुछ लकड़ीके टुकड़े व बुरादा डाल कर वातावरण लध्वीकरण रखते हैं।

लोहेका आक्साइड (गेरू)

लोहेके आक्साइडसे पीलासे बादामी रंग तक प्राप्त हो सकता है। लध्वीकरण वायुमें हरा रंग प्राप्त होता है जिसे "सीलेडन-हरा" कहते हैं। फेरस सल्फेटके फूँकनेसे लोहेका आक्साइड प्राप्त होता है। यदि फेरस सल्फेट के साथ जिंक सल्फेट व अलुमिना मिलादें तो पीला रङ्ग बहुत चमकदार हो जाता है और अन्तमें नारंगीसे

कपिलवर्ण हो जाता है। यदि फूँकनेका तापक्रम ६००° — ६५०° श० हो तो मूंगा-लाल वा रक्त लाल प्राप्त होता है। ७००°—७५०°श० गरम करनेसे बैगनी – बादामी या बैगनी काला प्राप्त होता है। मैंगनीज़ सल्फ़ेटसे काला रंग गाढ़ा हो जाता है। लोहेके आक्साइडको तीन वा चार गुने (तौलमें) द्रावक क व ख के साथ मिलानेसे ये रंग प्राप्त होते हैं। पीला व लाल लुक-रंगोंके लिये लोहा उपयुक्त नहीं है। ऐसे लुक-रंगोंके लिये एक विशेष प्रकारका खनिज "जापानी रेड" प्रयुक्त होता है उसका प्रायः ५ प्रतिशत बर्तनोंकी मिट्टीमें मिलानेसे पकानेपर बहुत सुन्दर मांस सी आभा वाला लाल रंग प्राप्त होता है। इस जापानी रेडका संगठन निम्नलिखित है।

लोहेका आक्साइड	८·२४ भाग
सिलिका	८७·३८ ,,
अलुमिना	१·२५ ,,
गरम करनेपर हानि	१·२० ,,

मैंगनीज़ रंग

हल्का और गाढ़ा इनेमल बादामी रंग मैंगनीज़ यौगिकों से प्राप्त होता है। मैंगनस् आक्साइड और अलुमिना के मिलानेसे "मैंगनीज बादामी" तैयार होता है। मैंगनस् सल्फेट और पोटाश ऐलम (फिटकरी) के विलयनको

मिलाकर उसमें सोडियम कार्बोनेटके विलयन डालनेसे अव क्षेपको धो और सूखा कर फूँकनेसे "मैंगनीज़ बादामी" प्राप्त होता है। इस बादामीकी आभा उपर्युक्त दोनों अवयवोंके अनुपातपर निर्भर करती है। इसे द्रावकके साथ मिलाकर इस्तेमाल करते हैं। यदि लुकमें अलकली अधिक हो तो अलकली परमैंगनेटके बननेसे बैगनी रंग प्राप्त होता है।

युरेनियम

युरेनियमसे अनेक पीले रंग प्राप्त होते हैं। आक्सीकरण वायुमें हलका हरा-पीलासे लेकर चमकीला सुर्ख रंग तक प्राप्त हो सकता है और लघ्वीकरण वायुमें हरा-बादामी से काला तक प्राप्त होता है। ये रंग १० कोन तक स्थायी होते हैं। इस कारण जहाँ अन्य पीले रंग इस्तेमाल नहीं हो सकते वहाँ ये होते हैं। बाजारोंमें एक धुंधला नारंगी रंग बिकता है यह वस्तुतः सोडियम व पोटेशियम युरेनेट होता है।

क्रोमियम रंग

क्रोमियमसे विभिन्न अवस्थाओंमें विभिन्न रंग प्राप्त होते हैं। क्रोमियम रंगको आगमें पकानेके बाद खूब धोनेकी ज़रूरत पड़ती है। सफ़ेद खलीको क्रोमियम आक्साइड के साथ मिलानेसे "विक्टोरिया हरा" वा "पन्ना-हरा

तैयार होता है। लेड क्रोमेट और रेड लेड ३५ भागको इसके तिगुने द्रावकके साथ मिलाकर जलानेसे चमकीला सुर्ख रंग प्राप्त होता है। इसे "मुंगा सुर्ख" कहते हैं। इन सुर्ख रंगोको जहाँतक हो सके निम्न तापक्रम पर फूंकना चाहिये। ऊँचे तापक्रम पर ये विच्छेदित हो जाते हैं। इन्हे आक्सीकरण वायुमे फूँकना चाहिये नहीं तो लाघ्वी-करण वायुमें धुँधले हरे रंगके हो जाते हैं।

टिन आक्साइड को एक प्रतिशत क्रोमियम आक्साइडके साथ आक्सीकरण वायुमें गरम करनेसे फूँकने के तापक्रमके अनुसार गुलाबी अथवा गाढ़ा किरमिजी रंग प्राप्त होता है। इसे 'क्रोम-टिन गुलाबी" कहते हैं। चूना के डालनेसे प्रक्रिया का तापक्रम कम हो जाता है और उसके साथ साथ उसका रंग अधिक स्थायी होता है। नीचे लिखे नुसखेसे बहुत सुन्दर गुलाबी रंग प्राप्त होता है।

टिन आक्साइड	६० भाग
सफ़ेद खली	३० "
फ्लिट	५ "
पोटेशियम डाइक्रोमेट	५ "

पोटेशियम डाइक्रोमेट को पानी में घुलाकर और चीजों को उसमें मिला कर १२—१३ कोन के आक्सीकरण

तापक्रम पर पकाने से यह रंग प्राप्त होता है। इस जले हुये ढेर को पीस कर गरम जल से तब तक धोना चाहिये जब तक धोया हुआ पानी बिल्कुल साफ़ न हो। रंग ऊँचे और नीचे दोनों तापक्रमों पर इस्तेमाल हो सकता है। ऊँचे तापक्रम के लिये इसमें ४ गुना (तौलमें द्रावक मिला कर इस्तेमाल करना चाहिये। सफेद खलीके कुछ अंशके स्थानमें फ्लोरस्पार या पुराना प्लास्टर) का साँचा सुविधा से प्रयुक्त हो सकता है।

मिश्रित रंग

मिश्रित रंगों के लिये अनेक रंगीन आक्साइड को इस्तेमाल करते हैं। इन मिश्रित आक्साइडों को आग पर फूँक कर द्रावकोंके साथ मिला कर प्रयुक्त करते हैं।

६० भाग क्रोमियम आक्साइड और ४० भाग कोबाल्ट आक्साइड को ६-१० कोन पर लध्वी-करण वायुमें जलाने से " रूसी-हरा" प्राप्त होता है।

४५ भाग फेरिक आक्साइड, ४३ भाग क्रोमियम आक्साइड और १२ भाग कोबाल्ट आक्साइड से काला रंग प्राप्त होता है।

५२ भाग फेरिक आक्साइड और ४८ भाग क्रोमियम आक्साइड से बादामी रंग प्राप्त होता है। थोडा जिंक आक्साइड से रंग कुछ गहरा हो जाता है।

२४ भाग फेरिक आक्साइड, २० भाग क्रोमियम आक्साइड, ३ भाग अलुमिना और ५३ भाग जिंक आक्साइड से चाकलेट रंग बनता है।

१२ भाग फेरिक आक्साइड, १० भाग क्रोमियम आक्साइड, २८ भाग अलुमिना और ५० भाग जिंक आक्साइड से नारंगी गुलाबी रंग प्राप्त होता है।

द्रव सोना

गंधक-बालसम नामक पदार्थमें सोना घुल जाता है। इस प्रकार घुल कर स्वर्णका रेज़िनेट बनता है। यदि इस द्रवको लुक फेरे हुये बर्तनोंपर लगाकर संवृत्त भट्टीमें पकाते हैं तो उन बर्तनोंपर चमकीला सोना रह जाता है। इस द्रवको नीचे लिखे तरीकेसे तैयार करते हैं।

४·८ ग्राम सोनेको, २८.८ ग्राम अम्लराजमें घुलाते हैं। सोनेके इस विलयनमें सल्फर बालसम आधाग्राम तारपीनका तेल २० ग्राम, वेनिस तारपीन १० ग्रामका मिश्रण डालकर उसे खूब मिलाकर वाष्प-उष्मक पर गरम करते हैं। जब वे खूब मिलजाते है तब करीव १२ घण्टा रखकर विलेय भागको ढाल लेते हैं। यदि यह अधिक आम्लिक है तो जलसे इसे धो डालते है और यदि बहुत गाढ़ा है तो तारपीनसे पतला बना लेते हैं।

गन्धक बालसम बनानेकी रीति यह है'—१ भाग वेनिस

तारपीनको ५ भाग तारपीनके तेलमें खूब मिलाकर उष्मक पर गरम करते हैं ताकि वे मिलकर समावयव बन जाय। जब वह समावयव हो जाता है तब उसमे एक भाग महीन पीसा हुआ गंधक डालकर बिलकुल घुला लेते हैं।

चमक

लुक फेरे हुये बर्तनोंपर बिस्मथका बहुत पतला लेप देनेसे उनपर चमक आ जाती है। इससे बिस्मथ लवण आक्साइडोंके साथ मिलाकर चमकके लिये इस्तेमाल होता है। निम्नलिखित नुसख़ेसे मोती-सी-चमक प्राप्त होती है।

३० ग्राम रजनको धीरे धीरे गरम कर पिघलाते हैं और तब बराबर हिलाते हुये उसमें १० ग्राम बिस्मथ नाइट्रेट डालते हैं। ज्योंही वह बादामी रंगका हो जाता है त्योंही उसमें बराबर हिलाते हुये ४० ग्राम तारपीनका तेल मिलाते हैं। ठंडे होनेपर ३५ ग्राम तारपीन और डालते हैं। बिस्मथ लवणक घुलजानेके लिये देर तक मिलाने की ज़रूरत पड़ती है। कुछ दिनों तक इसे रख देते हैं। उसपर यदि कोई झाग जम जाय तो उसे फेंक डालते हैं।

रंगीन चमक

ऊपर लिखी विधिसे तैयार पदार्थमें युरेनियम नाइट्रेट के डालनेसे कुछ सुर्खी लिये हुये बादामी चमक प्राप्त

होती है। इन दोनोंके मिलानेसे नकली सोनेकी चमक आती है। कोबाल्टसे धुंधला बादामी और क्रोमियमसे हरी चमक आती है। इन चमकोंको ब्रुशसे बर्तनोंपर लगाते है और उन्हे संवृत्त भट्ठीमे पकाते हैं। अच्छी चमक के लिये यह आवश्यक है कि इन्हे एक भावसे लगावें। चमकोंको लगाकर उन्हे शीघ्र ही सुखा लेते हैं ताकि वे बूंदोंमें न हों, नहीं तो चमक एकसा नहीं होता है।

सातवां अध्याय

जलावन भट्ठा और तापमापन

दहनसे ताप उत्पन्न होता है। दहन आक्सीकरण क्रिया है। यह क्रिया इतनी तेज़ होनी चाहिये कि उससे पर्याप्त ताप उत्पन्न होकर तापक्रमकी वृद्धि करे। मिट्टीके बर्तनोंके पकानेमें जो जलावन इस्तेमाल होते हैं उनमें जलने वाली चीज़ें कार्बन, हाइड्रोजन और गंधक होती हैं और जलानेवाली चीज़ आक्सीजन। इस कारण जलावनों के जलानेमें पर्याप्त वायुका होना ज़रूरी है।

जब कार्बन पूर्णरूपसे जलता है तब वह कार्बन डायक्साइड बनता है। वायुकी कमीमें कार्बन मनाक्साइड बनता है। हाइड्रोजन जलकर पानी बनता है और गंधक सल्फर डायक्साइड। इन सब चीज़ोंके जलनेमें ताप उत्पन्न होता है। बर्तनोंके पकानेमें जो जलावन इस्तेमाल होते हैं वे लकड़ी, कोयले, गैस और तेल हैं। अब बिजलीका भी इस्तेमाल होना शुरू होगया है। लकड़ी का इस्तेमाल अधिक नहीं होता। यद्यपि लकड़ीसे अधिक स्वच्छ आग प्राप्त होती हैं पर ऊँचे तापक्रमके लिये लकड़ी महँगी पड़ती है। कोयला ही आमतौरसे बर्तनोंके पकानेमें

प्रयुक्त होता है। कोयला साधारणतया तीन प्रकार का होता है।

अंथ्रेसाइट कोयलेमें कार्बनकी मात्रा सबसे अधिक रहती है, पर यह छोटी ज्वालामे जलता है। मध्यम ताप-क्रम के लिये अंथ्रेसाइट इस्तेमाल होता है। बिटुमिनी कोयलेमें वाष्पशील अवयवोंकी मात्रा अधिक रहती है। यह ऊँचे तापक्रम और बडी ज्वालाओंके लिये इस्तेमाल होता है। लिगनाइट, पीट और ब्राउन कोयलेमें जलकी मात्रा अधिक रहती है। सामान्य तापक्रम वाले भट्ठोंमे ये इस्तेमाल होते है। जर्मनी इत्यादि देशोंमें ब्राउन कोयलेको तारकोल व पिचके साथ मिलाकर "ब्रिकेट" तैयारकर भट्ठोंमें इस्तेमाल करते हैं। अच्छे कोयलेमें निम्नलिखित गुण होने चाहिये।

१—कोयला लंबी ज्वालाके साथ जले और उससे ऊँचा तापजनक मूल्य प्राप्त हो।

२—कोयलेमें राख की मात्रा कम हो।

३—राखमें सख्त गोले न बनें।

४—कोयलेमें गधककी मात्रा जहाँ तक हो सके कम हो।

आजकल कोयलेके स्थानमें गैसोंका प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। गैसें कोयलेसे तैयार होती हैं। कहीं-कहीं गैसें अलग तैयार हो भट्ठोंमें आती हैं और कहीं-कहीं

भट्ठोंके मुख पर ही तैयार होती हैं। यदि गैसें बाहर तैयार हों तो इससे अवश्य ही बहुत कुछ ताप नष्ट हो जाता है पर इससे कुछ लाभ भी होते है।

जलावनोंके जलानेसे जो क्रियाएँ होती हैं उन्हें हम चार मण्डलोंमें विभाजित करते हैं। राख, दहन, विघटन और स्रवण। दहन मण्डलमें तापोज्ज्वल कार्बन वायुके द्वारा जलकर कार्बन डायक्साइड बनता है। इस दहनसे ताप उत्पन्न होता है। यह ताप कोयलेके तापक्रमको बढ़ाता है। इससे कोयलेके वाष्पशील अवयव कोयला-गैसके रूपमें निकलते हैं। जब यह गैस तप्त कोक होकर जाती है तब कार्बन डायक्साइड कार्बन मनाक्साइडमें परिणत हो जाता है, विशेषत. जब वायुका आधिक्य नहीं है। इस परिवर्तनसे तापका शोषण होता है, इससे कोयलेका तापक्रम कम हो जाता है। इस निम्न तापक्रम पर कार्बन मनाक्साइड विच्छेदित हो कार्बन डायक्साइड और कार्बन बनता है। यह कार्बन फिर आक्सीजनके साथ संयुक्त नहीं होता, पर धुएँके रूपमें निकलता है या भट्ठोंकी दीवालोंपर कार्बनके रूपमें निःक्षिप्त होता है। कार्बनका यह निःक्षेप अधिकसे अधिक ५००° श० तक होता है। १०००° श० पर यह बिलकुल नहीं होता। राखके गड्ढेमें जल रहनेसे जब जले हुये गोले उसमें गिरते हैं तब जल भाफ बनकर उठता है और दहकते कार्बनके साथ मिलकर कार्बन मनाक्सा-

इड और हाइड्रोजन-जलगैस-बनता है। इस क्रियामें तापका शोषण होता है। इससे तापक्रम कुछ कम हो जाता है। यह जलगैस कक्षमें जाकर ताप उत्पन्न करता है।

कोयलेको गैसोंमें परिणत करनेके लिये कुछ आक्सीजन व वायु की जरूरत पडती है। जो वायु चूल्हेके छडसे प्रविष्ट करती है उसे "प्राथमिक वायु" कहते हैं। यह कार्बनको कार्बन मनाक्साइडमे आक्सीकृत करनेमे प्रयुक्त होता है। जब कोयलेकी गैसें भट्ठियोंमें जलती हैं तब उन्हें पूर्ण रूपसे आक्सीकृत करनेके लिये और आक्सीजन व वायुकी जरूरत होती है। इस वायुको "गौण वायु" कहते हैं। यह वायु भट्ठियोंमें प्रविष्ट होनेके पहले गरम कर ली जाती है।

अशुद्ध खनिज तैल भी यदि सस्ता हो तो भट्ठियोंमें गरम करनेमें प्रयुक्त हो सकता है। दबावमें तैलको लाकर भट्ठियोंमें वायु व जल-वाष्प मिलाकर बरनरोंमें जलाते हैं। भारतमें खनिज तैल इतना सस्ता नहीं है कि इस काममें प्रयुक्त हो सके। पर तैलके व्यवहारसे कुछ लाभ अवश्य है। तैलसे चीजें अच्छी पकती हैं, बर्तन साफ रहते हैं, और मजदूरीमें कम खर्च पड़ता है। तेलके रखनेमें भी कम खर्च पड़ता और कम स्थान लगता है। इससे भट्ठियाँ साफ़ रहती हैं और जल्दी गर्म हो जाती हैं, और समयकी बचत होती है।

भट्टा, भट्टी और चूल्हा

मिट्टीके बर्तन विशेष भट्टियों व चूल्होंमें पकाये जाते हैं। बड़ी भट्टीको भट्टा कहते हैं। भट्टियाँ भिन्न-भिन्न सामानों और तापक्रमोंके लिये भिन्न-भिन्न आकार और प्रकारकी होती है। इन भट्टियोंमें निम्नलिखित अधिक महत्वकी हैं।

ऊपर खुले हुये भट्टे

इसे "क्लैम्प" कहते हैं। ये वे भट्टे हैं जो सामान्य ईंटोंके तैयार करनेमें इस्तेमाल होते हैं। ये कच्ची ईंटोंके बने होते हैं। इनके बनानेमें बहुत कम खर्च पड़ता है और आवश्यकतानुसार छोटे व बड़े बन सकते हैं। पर दोष इनमें यह है कि बहुतसी ईंटे ख़राब हो जाती हैं और वर्षा और बातसे इन्हें बचानेका कोई उपाय नहीं होता। इन भट्टोंको पकी हुई ईंटोंसे दीवाल बनाकर सुधार सकते है। जब इन भट्टोंको ऊपरसे बन्द कर देते हैं तब ये ऊपरसे बन्द भट्टे हो जाते हैं।

ऊपरसे बन्द भट्टे

ऊपरसे बन्द भट्टे तीन प्रकारके होते हैं। एक, वे जिनका बहाव ऊपरकी ओर होता है। दूसरे, वे जिनका बहाव नीचेकी ओर होता है और तीसरे वे जिनका बहाव क्षैतिज होता है। पकने वाले बर्तन भट्टेके अन्दर रखके

जाते हैं। और भट्टेके बगलकी दीवालोंसे वे जलाये जाते
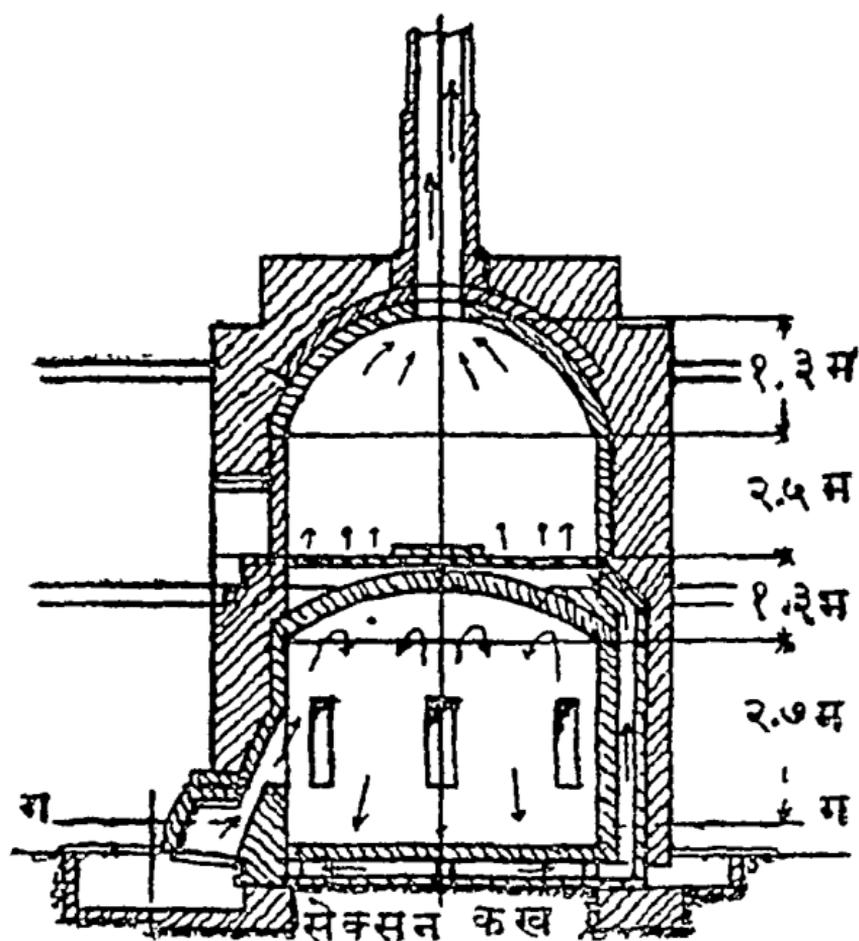
चित्र—१०

एक कक्ष वाला भट्ठा

हैं। इनके ऊपरमें छेद होते हैं जिससे धुएँ और जलती हुई गैसें निकलती हैं। चूँकि इनमें गैसें ऊपरक और उठती हैं इस कारण इन्हें ऊपर बहाव वाले भट्ठे कहते हैं।

नीचे बहाव वाले भट्ठेमें गैसें नीचेकी ओर बहती हैं और इनमें एक व एकके ऊपर दूसरे, दो कक्ष होते हैं। इनका कक्ष आयताकार व वर्गाकार होता है। इन भट्ठोंमें ताप एक सा वितरित होता है। इस कारण इनमें सामान एकसे पकते हैं। जलावनकी बचत और समय कम लगनेकी दृष्टिसे दो कक्षवाले भट्ठे अच्छे होते हैं। ऊपरका कक्ष नीचेके कक्षकी तप्त गैसोंसे गरम होता है। ये भट्ठे लुक फेरनेसे पहले बर्तनोंके पकानेमें विशेष रूपसे प्रयुक्त होते हैं।

कैसेल व न्यूकैसेल भट्ठोंमे भट्ठेके एक किनारेपर चूल्हा रहता है और दूसरे किनारेमें चिमनी रहती है। इसमें ज्वाला क्षैतिज चलकर चिमनीसे निकल जाती है। इस कारण ऐसे भट्ठोंको "क्षैतिज बहाव भट्ठे" कहते हैं। यदि भट्ठे बहुत लम्बे नहीं हैं तो तापका वितरण एक सा होता है, नहीं तो लम्बे होनेसे तापका वितरण एकसा नहीं होता और बर्तन ठीक नहीं पकते।

ऊपर जिन भट्ठोंका वर्णन हुआ है वे आवर्त्त भट्ठे कहे जाते हैं। कुछ और भट्ठे होते हैं जिन्हें अविरत भट्ठे कहते हैं। इन भट्ठोके सिद्धान्त एक ही हैं, पर ये भिन्न-भिन्न प्रकारके होते हैं। ऐसे भट्ठोंमें एक "हौफमान भट्ठा" होता है। इन भट्ठोंमें एक कक्ष होता है। बर्तनोंके रखनेके लिये बारह दरवाज़े होते है। इन बारहोंमें नलियाँ होती
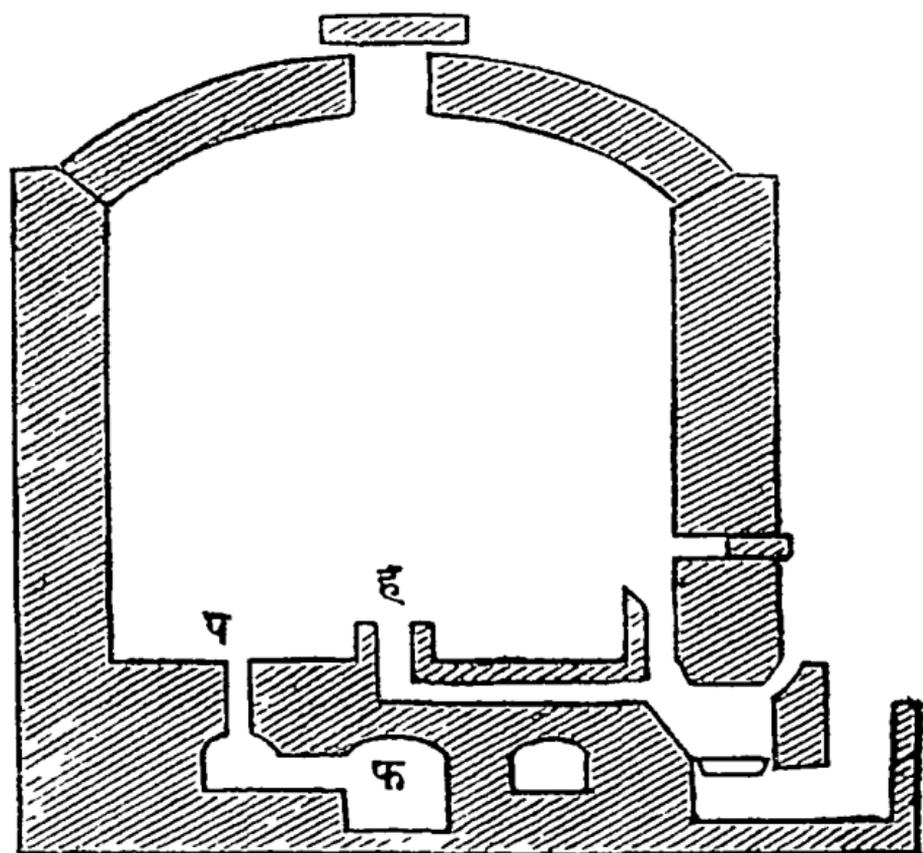
चित्र—११

दो कक्ष वाला भट्ठा

हैं जो एक प्रमुख नलीसे जुड़ी होती हैं। इन दरवाजोंको अलग-अलग बन्द करने और खोलनेका इन्तजाम होता है। इन दरवाजोंके बीचके स्थानको कक्ष कहते हैं और ये एक दूसरेसे एक परदेके द्वारा बन्द होते हैं। इन कक्षोंमें से कसी एकमें आग जलाते हैं, इससे बगलके कमरोंके तिष

काफी गरम हो जाते हैं जिससे उन पर कोयले फेंकनेसे कोयले जल उठते हैं। गरम गैसें एक कमरेसे दूसरे कमरेमें जाती हैं और जब उनका तापक्रम १५०°-२००° श० हो जाता है तब प्रधान नलीसे होकर चिमनी द्वारा निकल जाती हैं। जो बर्तन बड़े तुनुक होते हैं और जिनको उच्च तापक्रमपर गरम करनेकी जरूरत होती है उनके लिये ये भट्टे बड़े उपयोगी हैं। पर इस भट्टेमें तापक्रमका नियंत्रण उचित रूपसे नहीं हो सकता। इस कारण "मेन्डहाइम" भट्टा उत्कृष्ट कोटिके सामानोंके लिये अधिक उपयुक्त होता है। ऐसे भट्टेमें सारे कक्ष एक किनारे-से दूसरे किनारे तक नलके द्वारा मिले रहते हैं। ये सब कक्ष ज़मीनके नीचे रहते हैं। ऊपरसे नल द्वारा गैसें प्रविष्ट करती हैं और केन्द्रकी चिमनीसे गैसोंका बहाव होता है।

सुरंग (टनेल) किस्मके अविरत भट्टेमें मिट्टीके सामान दुःगालनीय मिट्टीके ठेलोंपर रक्खे जाते हैं और ये ठेले लोहेके रेलोंपर सुरंगके अन्दर चलते हैं। भट्टोके एक स्थानपर ही सामान गरम होते हैं। ठेलोंके नीचेसे वायु प्रविष्ट करती है और सारे भट्टेमें बहती रहती है और क्रमसे ठंडे दहन और तप्त मण्डलोंमें बहती है। ये भट्टे कोयले या गैस दोनोंसे गरम किये जा सकते हैं। इस प्रकारके भट्टेमें निम्नलिखित गुण हैं।

१—जलावनकी बड़ी बचत होती है ।

२—भट्ठेका एक भाग ही गरम होता है । इससे विकीरणसे तापका क्षय नहीं होता ।

३—सुरंगके कायम रखनेमें कम खर्च पडता है ।

४—भट्ठीके कुछ थोड़े भागको ही उच्च कोटिके दुःगालनीय सामानोंसे बनाना पडता है ।

५—इनके बर्तन अधिक नहीं टूटते ।

बर्तनोंपर इनेमल रंग चढ़ाकर पकानेके लिये संवृत्त भट्ठे प्रयुक्त होते है । जिन बर्तनोंको जलावन गैसोंके संसर्गसे अलग रखना होता है उन्हे भी इस भट्ठेमें पकाते हैं । इन भट्ठोंके कक्ष दुःगालनीय सामग्रियोंसे बने होते हैं और ये बाहरसे गरम किये जाते हैं । कक्षके अन्दरकी दीवालोंसे विकीरण और चालन द्वारा ताप जाता है । इस कारण यह जरूरी है कि कक्षोकी दीवाले जहाँ तक हो पतली हों और ऐसी चीजोंसे बनी हो जो ताप-सुचालक हों । ये भट्ठियाँ ऐसी बनी होती है कि गैसें और ज्वालाएँ भट्ठीकी बाहर और अन्दरकी दीवालोंके बीचसे घूमें और अन्तमें एक सामान्य नलसे होकर चिमनी द्वारा बाहर निकल जाय । ड्रेस्लर किस्मकी अविरत संवृत्त भट्ठियाँ आजकल बहुत अधिक बर्तनोंके पकानेमें प्रयुक्त हो रही हैं । इस भट्ठेमें १२००° श० तक तापक्रम

प्राप्त हो सकता है और इनमें बर्तनोंको रखनेके लिये सैगरोंकी ज़रूरत नही पड़ती।

आजकल बिजलीकी भी भट्टियाँ प्रयुक्त होने लगी है। अनेक ऐसी भट्टियाँ बाजारोंमें बिकती हैं। इन भट्टियोंमें निम्नलिखित गुण हैं।

१—इन भट्टियोंमे स्वच्छ आक्सीकरण वातावरण प्राप्त होता है। धुएँ इसमें बिल्कुल नही होते।

२—इन भट्टियोंमें तापक्रम एकसा प्राप्त होता है। इस कारण बर्तन एकसे पकते है।

३—कम मजदूरी लगती है और पकना सरलतासे नियंत्रित किया जा सकता है।

४—इसके मरम्मतमे कम ख़र्च पड़ता है।

५—कम समयमे बर्तन पकते है।

सबसे बड़ा दोष इसमें यही है कि ये कुछ महँगी होती है और यदि बिजली बड़ी सस्ती न हो तो और भी महँगी पड़ती है।

तापक्रमका मापन

अनेक उपायोंसे भट्टियोंके अन्दरके तापक्रम जाने जा सकते है। तापक्रमके जाननेका सबसे सरल तरीका भट्टियोंके अन्दरकी चीजों व भट्टियोंके अन्दरकी दीवालोंके रंगसे है, पर इसके लिये बड़ा अनुभव होना चाहिये।

यदि भट्ठियोंका रङ्ग सुर्ख़ होना शुरू हो तो तापक्रम ५००° श०
धुंधला सुर्ख़ हो तो " ७००° श०
चेरी सुर्ख़ हो तो " ८००° श०
चमकीला सुर्ख़ हो तो " १०००° श०
चमकीला नारङ्गी हो तो " १२००° श०
चमकीला सफ़ेद हो तो " १३००° श०
अति चमकीला सफ़ेद हो तो " १४००° श०
दहकता सफेद हो तो " १५००° श०

समझना चाहिये । यह रंग तभी देखना चाहिये जब ज्वाला स्वच्छ रहे और उसमें कोई हाइड्रोकार्बन न हो। निरीक्षकको अँधेरे स्थानपर खडा होकर देखना चाहिये ताकि सूर्य-प्रकाशकी चमकसे आँखे प्रभावित न हो।

वर्तन पकानेकी भट्टियोंमें अन्य साधनोंसेभी तापक्रम का ज्ञान प्राप्त करते हैं इन्हे उग्रतापदर्शक (पाइरोस्कोप) और उग्रतापमापक (पाइरोमीटर) कहते हैं।

उग्रतापदर्शक ऐसे साधन हैं जिनसे उनमें जो परिवर्त्तन होता है उससे तापक्रमका ज्ञान होता है। सन् १८८६ ई० में हरमैन सेगर नामक एक व्यक्तिने कुछ सुण्डाकार पदार्थ बनाये जिन्हें पिरेमिड व 'कोन' कहते हैं। ये कोन किसी विशेष तापक्रम पर भट्ठियोंके अन्दर कोमल होकर झुक जाते हैं। ये कई पदार्थोंके मिश्रणसे बने होते हैं। चूँकि ये मिश्रणके बने होते हैं, इनका

कोई विशिष्ट कथनांक नहीं होता है। इनका कोमल होना भट्टीके जलानेके समय और भट्टीके अन्दरके वातावरणपर निर्भर रहता है।

भट्टीमें झुक जानेका तापक्रम

कोन नम्बर	श०	कोन नम्बर	श०
०२२	६००°	०५ क	१०००
०२१	६५०	०४ क	१०२०
०२०	६७०	०३ क	१०४०
०१९	६९०	०२ क	१०६०
०१८	७१०	०१ क	१०८०
०१७	७३०	१ क	११००
०१६	७५०	२ क	११२०
०१५ क	७९०	३ क	११४०
०१४ क	८१५	४ क	११६०
०१३ क	८३५	५ क	११८०
०१२ क	८५५	६ क	१२००
०११ क	८८०	७	१२३०
०१० क	९००	८	१२५०
०९ क	९२०	९	१२८०
०८ क	९४०	१०	१३००
०७ क	९६०	११	१३२०
०६ क	९८०		

कोन नम्बर	श०	कोन नम्बर	श०
१२	१३५०	३०	१६७०
१३	१३८०	३१	१६६०
१४	१४१०	३२	१७१०
१५	१४३५	३३	१७३०
१६	१४६०	३४	१७५०
१७	१४८०	३५	१७७०
१८	१५००	३६	१७९०
१९	१५२०	३७	१८२५
२०	१५३०	३८	१५५०
२६	१५८०	३९	१८८०
२७	१६१०	४०	१९२०
२८	१६३०	४१	१९६०
२९	१६५०	४२	२०००

भट्ठी जलानेके दो घण्टे बाद ये तापक्रम प्राप्त होते हैं, पर यदि जलानेका समय अधिक लगे तो ये कोन ऊपर लिखित तापक्रमसे नीचे ही कोमल होजाते हैं। लघ्वीकरण वातावरणमें ये कोन बहुत विश्वनीय नहीं हैं क्योंकि ऐसी दशामें इन कोनों के छेदों पर कार्बन बैठ जाते हैं और तब ताप अन्दर ठीक तरहसे प्रविष्ट नहीं कर सकता।

इसका परिणाम यह होता है कि इनके कोमल होने का तापक्रम बहुत कुछ बढ़ जाता है। इन सेगरोंके अतिरिक्त अन्य प्रकारके उग्रतापदर्शक भी अनेक स्थलों पर प्रयुक्त होते हैं, पर ये सब सेंगर कोनसे अच्छे नहीं होते।

उग्रतापमापक ऐसे साधन हैं जिनसे तप्त पदार्थोंका तापक्रम मापा जासके। इनका प्रयोग भट्टियोंमें उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। कई प्रकारके उग्रतापमापक होते है, पर उनमें दो बहुत अधिक महत्वके है।

१—ताप-वैद्युत उग्रतापमापक जो १४००° श० तक तापक्रममापनमें प्रयुक्त हो सकता है

२—विकीरण उग्रतापमापक। यह८५०° से १६००° श० तक तापक्रममापकमें प्रयुक्त हो सकता है।

सेबेकने देखा कि दो विभिन्न धातुओंके संगम पर विद्युद्वाहक बल होता है और यदि किसी विद्युत् कुंडली में दो संगम हो तो उसमे दो विरुद्ध बल होते है। यदि एक संगम उच्चतर तापक्रम पर हो तो उसमे संयुक्त विद्युद्बाहक बल होगा जिससे उस कुंडलीमे विद्युत् प्रवाहित होगी। इस विद्युद्वाहक बलका परिमाण (१) धातुओंकी प्रकृति और (२) दो संगमोंके तापक्रमोंकी विभिन्नता और (३) दो संगमोंके वास्तविक तापक्रम पर निर्भर रहता है। धातुयुग्म जो उग्रतापमापकमे १२००° श० तक तापक्रमके नापनेमे प्रयुक्त होते हैं वे तांबा,

निकेल, लोहा, क्रोमियम सदृश हीन-धातुओंको मिश्र-धातुके बने होते हैं। १४००° श० तक तापक्रममापकके लिये प्लैटिनम और रोडियम-प्लाटिनमकी मिश्र-धातुके बने होते हैं। विद्युद्वाहक बल किसी मिली-वोल्टमापक व विभव-मापक द्वारा मापा जाता है। इन पर ऐसे चिह्न बने होते हैं जिनसे सीधे तापक्रम सूचित होता है।

विकीरण उग्रतापमापकमें जितना ही ऊँचा तापक्रम हो उतना ही वह अधिक यथार्थ होता है। इस विधिमें गरम पदार्थोंसे निकले सब आवृत्तिके विकीरण किसी दर्पण वा लेंस पर केंद्रित हो ताप-विद्युत् युग्म पर पड़कर मिली-वोल्ट मापकको प्रभावित करते हैं। इन उग्रताप दर्शक व मापकमें अनुलेखक यंत्र लगे रहते हैं जिनसे चौबीसों घण्टेका तापक्रम अंकित होता रहता है।

आठवां अध्याय

दुःगालनीय

चीनी मिट्टीके बर्तनोंको भट्टीमें पकानेके लिये कुछ ऐसे सन्दूकोंकी जरूरत पड़ती है जो आगमें जल्दी गलें नहीं, और जिनमें बर्तनोंको रखकर पका सके। ऐसी चीजोंको दुःगालनीय अर्थात् कठिनतासे पिघलने वाली वस्तुएँ कहते हैं। इनमे रखकर बर्तनोंको पकानेसे भट्टीकी ज्वालाएँ या ज्वाला-गैसें सीधे बर्तनोंके संसर्गमें नहीं आती। ये सन्दूकें किसी भी कद और आकारके हो पर ये सकते हैं। साधारणतया गोल या आयताकार होते हैं। इन सन्दूकसी शकलकी वस्तुओं को "सैगर" कहते है।

सैगर अग्निजित् मिट्टीके बनते हैं। उनमें थोड़ा और पदार्थ मिला रहता है जिसे "ग्रौग" कहत्ते है। ग्रौग टूटे हुये स्वच्छ सैगरके पीसनेसे प्राप्त होता है। यह तीन आकारका होता है। मोटा, मध्यम और महीन। मोटे ग्रौगके दाने ७ मिलीमीटर व्यासके, मध्यमके ३ मिलीमीटर और महीनके ३ मिलीमीटरसे छोटे व्यासके होते हैं।

मिट्टीमें ग्रौग कितना मिलाना चाहिये, यह मिट्टीकी नम्रता और सैगर की मज़बूतीपर निर्भर रहता है। ताप-

क्रमके घटने-बढनेसे सैगरमें जो परिवर्त्तन होते हैं उन्हें सहन करनेमें ग्रौगसे सहायता मिलती है और सैगरमें सिकुड़न कम होती है। यदि ग्रौगकी सामग्री ठीक पकी हुई है तो ग्रौग मिट्टीके साथ मिलकर सैगर बननेमें अधिक सिकुड़ती नही। इस कारण सैगरमें ग्रौगका होना जरूरी है। जब सैगर भट्ठीमें रक्खा जाता है अथवा जब भट्ठी ठडी होती है तब ग्रौगके कारण ही तैयार तापक्रमके परिवर्त्तन सहन करनेमें समर्थ होता है। इस दृष्टिसे मोटे ग्रौग अच्छे होते हैं पर इसमे वितानक्षमता और महीन होनेका गुण कम हो जाता है। महीन ग्रौगसे अधिक सुषरिता आती है, पर इसका मिश्रण तापक्रमके अकस्मात् परिवर्त्तन को उतना अधिक सहन नही कर सकता। इन सब बातोंको देखते हुये अच्छा यही है कि भिन्न-भिन्न आकार के ग्रौगों-को मिलाकर प्रयुक्त करें। ग्रौगोंका सगठन वैसा ही होना चाहिये जैसा मिट्टीका हो, और यदि हो सके तो उसे पहले उच्च तापक्रमपर पका लेना चाहिये।

सैगर बनानेके लिये नम्र मिट्टी और बलुआर मिट्टी दोनोंको इस्तेमाल करना चाहिये। इन दोनोंका अनुपात प्रयोगसे ही निश्चित किया जा सकता है। साधारण तौरसे ग्रौगका अनुपात ५० से ६० प्रतिशत रहता है। सैगर बनानेके लिये निम्नलिखित नुसखा अच्छा है।

नम्र मिट्टी	३० भाग
बलुआर मिट्टी	१७ ”
मौटा ग्रौग	२० ”
मध्यम ग्रौग	३३ ”

छोटे कद्के सैगरोंके बनानेमें महीन ग्रौग काम आता है।

सूखे ग्रौग और अग्निजित् मिट्टीको एक दूसरेके ऊपर हमें रख पानी बारबार छिडकते हैं ताकि वे खूब मिल जॉय। यह मिलाना यंत्रोंसे भी हो सकता है, जहाँ जलके फव्वारे छोड़े जाते हैं। इस मिश्रणको फिर गूँथते और दबाते हैं और एक व दो बार पुगमिलमें भी डालकर दबाते है। इसे तब ठडे स्थानमें ढेर बनाकर पुराना होनेके लिये रख छोड़ते है। पुराना होनेपर इससे सैगर बनाते है।

हाथ से बनाना

जिस आकारका सैगर तैयार करना होता है वैसा हाथ-से मिट्टीका लोंदा बनाकर मेजपर महीन ग्रौग छीटकर बनाते है।

मशीनसे दबाकर बनाना

इस विधिमे लाभ यह है कि किसी भी आकारके सैगर बना सकते हैं। मिश्रणमें कम पानी देना चाहिये ताकि वह भले प्रकारसे दबाया जा सके। इस विधिमें

दोष केवल यही है कि सैगरके पेंदें पार्श्वसे अधिक दब जाते हैं जिससे सैगरके सब अङ्ग एक मजबूतीके नहीं होते। पेंदें पार्श्वसे अधिक मजबूत होते हैं। इस दोषको दूर करनेके लिये केवल उन्हीं सैगरोंको दबाते हैं जो ३ से ४ इंच ऊँचे होते हैं। इससे अधिक ऊँचे सैगर ३ या ४ बारसे अधिक इस्तेमाल करने पर फट जाते हैं। मशीन से एक आदमी प्रति दिन ३ इंच ऊँचा ३०० से ४०० तक सैगर बना सकता है।

जौलीसे बनाना

इस विधिसे केवल गोलाकार सैगर बनते हैं। मिश्रण पर्याप्त कोमल होना चाहिये ताकि खरदनीसे काम किया जा सके। इसके लिये साँचे दो अंशोंमें बनाये जाते हैं। इनका घेरा १ से २ इंच मोटा होता है और पेंदा बीचमें उठा हुआ होता है। इससे सैगरका पेंदा मजबूत होता है, ऐसा समझा जाता है। जौली पर वैसा ही काम होता है जैसा बर्तन बनानेमें होता है। केवल साँचे को हर बार महीन पिसी हुई मिट्टीसे धुरिया लेते हैं।

ढालना

कभी-कभी प्लास्टरके साँचोंमें ढालकर सैगर तैयार करते हैं। इस विधिमें अधिक ग्रोग इस्तेमाल करना पड़ता है। इससे यह विधि कुछ महँगी पड़ती है।

सैगरको लकड़ीके कठरे पर रख प्लास्टर व लोहेके तख्तोंपर सुखाते हैं। इसके लिये भट्टीसे निकले व्यर्थ तापको इस्तेमाल करते है। सैगरको जल्दी नहीं सुखाना चाहिये, नहीं तो महीन दरारें फट जाती है ।। सूखे सैगरो को उन्हीं भट्ठियोंमें पकाते हैं जिनमें बर्तन पकाये जाते हैं। पर सैगरोंको अकेला ही बिना कुछ उनमें रक्खे पकाना ठीक है। कुछ देशोंमें जहाँ भट्ठियोंमे दो मंजिलें होती है, नीचेकी मंजिलोंमे बर्तन पकाये जाते हैं और ऊपरकी मंजिलोंमे सैगर अकेला ही व हलके बर्तनोंको रख कर पकाये जाते हैं। पर इस प्रकार सैगर ठीक पकते नहीं है और वे टेढ़े हो जाते व टूट भी जाते हैं। जिन सैगरोंमें सीस-लुक फेरे हुये सामान रक्खे जाते हैं उनमें अन्दर पहले लुकसे लेप लेते हैं ताकि वे उनमें रक्खे बर्तनोंके लुकको सोख न लें।

सैगरोंको नम जगहों पर नही रखना चाहिये अथवा उन्हे ऐसी जगह पर न रखना चाहिये जहाँ वे पानी सोख लें। सैगर के नम होनेसे उनमेंसे भाफ निकल कर बर्तनों पर द्रवीभूत हो सकती है। इस वाष्पके साथ जलावन-गैसोंसे निकली गन्धककी वाष्प भी रह सकती है। ताप-क्रमके ऊँचा होनेसे यह वाष्प बर्तनोंको नुकसान पहुँचाती है।

सैगरोंके बराबर व्यवहारसे उनमें दरारें फट जाती

हैं। ज्योंही दरारें देख पड़े उन्हें सावधानीसे बन्द कर देना चाहिये। श्रोग और नष्ट लुक व जल-काँच इसके लिये इस्तेमाल हो सकता है। इस मिश्रणमें थोड़ी चीनी मिट्टी देते हैं ताकि वह चिपक सके। अधिक मिट्टीसे मिश्रण सिकुडकर गिर पडता है। जल-काँचसे यदि दरारें बन्द की जाँय तो सैगरको फिर पका लेना चाहिये। सैगर कितने दिनों तक काम दे सकते हैं, यह कहना कठिन है। २५ बार तक ये भट्ठियोंमें चढाये जा सकते है। आम तौरसे वे १५ बारसे अधिक काम नहीं देते। कुछ तो आठ नौ बारमें ही निकम्मे हो जाते हैं।

कारबोरंडमके भी सैगर बनते हैं। पिघले हुये स्फटिक के सैगर भी अच्छे और सस्ते होते हैं। इन्हे मिट्टीके साथ मिलाकर भी प्रयुक्त कर सकते हैं। अग्निजित् मिट्टी के स्थानमें चीनी-मिट्टी व "गेंद मिट्टी" भी प्रयुक्त हो सकती है। यदि स्फटिककी मात्रा ५०-६० प्रतिशत हो तो ऐसे सैगर अकस्मात् गरम व ठंढे होने पर टूटते नहीं हैं।

अग्निजित ईंट

ये ईंटें प्रधानत. अग्निजित् मिट्टीकी बनी होती हैं और ऊँचे तापक्रमको सह सकती हैं पर भिन्न-भिन्न कामों के लिये ये ईंटें भिन्न-भिन्न पदार्थोंसे बनती हैं। ये ईंटें आमतौरसे तीन प्रकारकी होती है।

क्षारीय अभिजित् ईंटें

ये ईंटें धातुओंके यौगिकोंके योगसे बनती हैं। इनमें मैगनीशिया, डोलोमाइट, जिरकोनिया बौक्साइट और लोहेके खनिज और कुछ क्षारीय धातु-मैल होते हैं। ये ईंटें प्रधानतः लोहे और इस्पातकी भट्टियोंमें प्रयुक्त होती हैं। मैगनीशियाकी ईंटें यद्यपि महँगी पड़ती है पर वे अधिक दिनों तक टिकती हैं। जिरकोनियाकी बनी ईंटें क्षारीय होती है और तापक्रमके अकस्मात् परिवर्तनसे टूटती नहीं हैं। ये ईंटें विद्युत-भट्ठियोंके छतों और अन्दरके भागोंमें प्रयुक्त होती हैं। बौक्साइटकी ईंटें भी क्षारीय समझी जाती हैं यद्यपि अनेक दृष्टियोंसे ये उदासीन होती हैं। क्षारीय धातु-मैलोंका इस पर कदाचित् ही कोई असर पड़ता है। यद्यपि चूना इन्हें शीघ्रतासे आक्रान्त करता है। ये ईंटें उन भट्ठियोंमें इस्तेमाल होती हैं जिनमें धातुएँ, धातुओंके आक्साइड व क्षारीय धातु-मैल बहुत उच्च तापक्रम तक गरम किये जाते हैं। लोहेके खनिज, हीमेटाइट और मैगनीसाइट भी कभी-कभी भट्ठियोंके अन्दरके भागोंके लिये प्रयुक्त होते हैं। ये मिट्टी और अलुमिनाकी अपेक्षा निम्न तापक्रम पर ही पिघल जाते हैं।

उदासीन ईंटें

ये ईंटें ग्रेफाइट, कारबोरंडम और क्रोमाइट इत्यादिसे

बनती हैं। कार्बनकी ईंटें तांबा, सीसा, अलुमिनियम और कभी-कभी इस्पातके तैयार करने की भट्ठियोंमें प्रयुक्त होती हैं। कार्बन पर तापक्रमका कोई असर नहीं पड़ता और यह धातु-मैलोंसे भी जल्दी आक्रान्त नहीं होता। गरम करनेसे इसके आयतनमें भी कोई परिवर्तन नहीं होता। इन ईंटोंको भट्ठीमें रखने पर अग्निजित् मिट्टीके सीमेंट व जलकाँचका लेप दे देना ज़रूरी है ताकि भट्ठीके गरम करनेके समय वे वायुसे जल न जाँय। कारबोरंडम की ईंटें बड़ी मजबूत होती हैं पर कुछ दिनोंके उपयोगके बाद सिलिकन कारबाइड बननेके कारण उनकी मज़बूती बहुत कुछ घट जाती है। ये ईंटें बडी कठोर होती हैं और उच्च तापक्रमका उन पर कोई असर नहीं होता। इनकी ताप-चालकता बड़ी ऊँची होती है। इस कारण ये ईंटें ड्राइज़लर भट्ठेके दहन-कक्षके निर्माणमें प्रयुक्त होती हैं।

क्रोम-लोह खनिज, जिसमें प्रायः ५० प्रतिशत क्रोमियम आक्साइड और २५ प्रतिशत लोहेका आक्साइड रहता है—की ईंटें बड़ी उपयोगी पर मँहगी होती हैं। ये ईंटें इस्पात भट्ठियोंमें तांबा, अण्टीमनी और वङ्ग निर्माणकी भट्ठियोंमें इस्तेमाल होती हैं। इनका पिघलना क्रोमियम आक्साइडके अनुपात पर निर्भर रहता है। शुद्ध क्रोमियम आक्साइड प्रायः पिघलता नहीं।

आम्लिक ईंटें

आम्लिक ईंटें या तो पूर्णतः सिलिका व रेतसे बनती हैं और उन्हे बाँधनेके लिये थोड़ा चूना व जल-काँच उसमें मिला देते है या ऐसी अग्निजित् मिट्टीसे बनती हैं जिन में सिलिका का अंश बहुत अधिक होता है। जितना ही सिलिका इन ईंटोंमें रहता है उतना ही वे आम्लिक होती हैं। सिलिका और अग्निजित् ईंटोंमें भेद यह है सिलिकाकी ईंटें गरम करने पर फैलती हैं और अग्निजित् ईंटें सिकुड़ती है। जहाँ सिकुड़न नहीं होना चाहिये और उच्च ताप-अवरोधकी आवश्यकता हो वहाँ ही सिलिकाकी ईंटें इस्तेमाल होती है। अर्ध-सिलिकाकी ईंटें यदि ठीक तरह से बने तो वे न फैलती है और न सिकुड़ती हैं। आम्लिक ईंटें प्रधानतः कोक निर्माणकी भट्टियोमें प्रयुक्त होती हैं। कुम्हारों की भट्ठियाँ प्रधानतः अग्निजित् मिट्टी की ईंटोंसे बनती हैं। ये ईंटें ऐसी होनी चाहिये कि उच्च तापक्रमको सह सके और भट्ठियोंकी नलियोंकी धूलोंसे आक्रान्त न हों। उन्हे अधिक सिकुड़ना भी नहीं चाहिये नहीं तो भट्ठियाँ टूटकर गिर पड़ेगी।

अग्निजित् ईंटोंके तैयार करनेकी विधि यह है कि अग्निजित् मिट्टी और टूटी हुई ईंटोंको ' एज-रनर-मिल" मे डाल कर पीसते हैं। जो छोटे छोटे टुकड़े मिलके सछेद पेंदेसे निकल आते हैं उन्हे "मिक्सर" में डालकर जलसे

नम्र बनाते हैं। मिक्सरसे उन्हें "पुगमिल" में डालकर मिट्टीको गूँथते हैं। ऐसी तैयार मिट्टीसे मशीन द्वारा ईंटें बना सकते हैं, पर हाथसे बनी ईंटें मशीनसे बनी ईंटोंसे अच्छी होती हैं क्योंकि मशीनकी ईंटे अधिक दबावके कारण सघन हो जाती हैं। हाथसे बनी ईंटोंका रूप और आकार स्वच्छ और ठीक-ठीक होता है, पर हाथोंसे कम ईंटें बन सकती हैं।

ईंटोंको बनाकर गरम गर्चों व गरम कमरोंमें सुखाते हैं। भटठोंके नष्ट तापसे सुखानेमें बहुत सस्ता पडता है। कुछ कारखानोंमें भट्ठोंके ऊपर ईंटोको रख कर सुखाते हैं। ये ईंटें ऐसी रक्खी जाती हैं कि वे ठीक तरहसे सूख सकें और उनके बीचसे गरम गैसें एकसा आ जा सकें ताकि उनके वाष्पशील पदार्थ गैस बनकर उड़ जाँय। ईंटें आधे इंचकी दूरीपर कतारोंमें कुछको चिपटा और कुछको किनारोंपर रखते हैं। इन ईंटोंको पकानेके लिये कई प्रकार-के भट्ठे इस्तेमाल होते हैं। पर साधारण भट्ठे आयताकार होते हैं। आजकल अवरित भट्ठे भी प्रयुक्त हो रहे हैं।

भट्ठोमे पकनेके सिद्धान्त

मिट्टीके बर्तन बनानेमें भट्ठोंमें पकानेका कार्य सबसे कठिन, मँहगा और महत्वका होता है। मिट्टीके कच्चे बर्तन तुनुक और मुलायम होते हैं, पानीसे जल्दी गल जाते

हैं। पकाने पर ये मजबूत और कठोर हो जाते हैं और तब जल अम्ल व अन्य द्रवोंसे जल्दी आक्रान्त नहीं होते। ये परिवर्तन मिट्टीके विच्छेदनसे होते हैं। मिट्टी आँशिक रूपसे पिघल जाती है और यह पिघली मिट्टी अन्य पदार्थोंको बाँध रखती है। भिन्न-भिन्न तापक्रमपर मिट्टीमें विभिन्न क्रियाएँ होती हैं। इन क्रियाओंके निम्नलिखित क्रम अधिक महत्वके हैं।

(१) धुआँ व भाफ लगनेका क्रम

यह १२०° श० तक होता है। वस्तुतः यह क्र सुखानेका है। इस क्रममें सूखनेकी कमी यदि कोई है तो पूरी हो जाती है और जलका जो कुछ अंश रहता है वह निकल जाता है। यह धुआँ लगना यदि ठीक तरहसे न हो तो वर्तन टूट सकते है और उनपर अप्रिय वस्तु यें द्रवीभूत व घनीभूत हो सकती है। जल-वाष्प यदि जल्द ी-से भट्ठेसे बाहर न निकल जाय तो यह सैगर व वर्तनों पर गन्धक-गैसोंके कारण आम्लिक रूपमें द्रवीभूत हो जाता है। इस कारण भट्ठोंमें वायु तेजीसे बहनी चाहिये ताकि भाफ और अन्य वाष्पशील पदार्थ जल्दी ही भट्ठों-से निकल जायँ। इस क्रममें भट्ठे तेज़ीसे नहीं जलाये जाते और भट्ठोंमें भाफ भरी रहनी चाहिये। इसीसे इस क्रमको धुआँ व भाफ लगना कहते हैं। पोरसीलेनके

सामानोंके लिये ५ से ६ घण्टे पर्याप्त हैं। वास्तवमें सामानोंकी प्रकृति पर इस क्रमका समय निर्भर रहता है।

विच्छेदन-क्रम, २००-२५०° श०

जब तापक्रम २००° श० पहुँचता है तब जो कुछ वाष्पशील कार्बनिक पदार्थ रहते हैं वे विच्छेदित हो जाते और लोहेके जल-संयोजित आक्साइड जल-वियोजित होना शुरू होते हैं। इस दशामें यदि बर्तनोंमें लोहेके आक्साइड और कार्बनिक पदार्थ अधिक न हों तो भट्ठेके जलानेका काम अधिक तेज़ होना चाहिये। जब भट्ठेका तापक्रम प्राय. ५००° श० पहुँच जाय व भट्ठा सुर्ख होना शुरू हो तब भट्ठेका जलाना मन्द कर देना चाहिये।

निर्जलीकरण-क्रम, ४५०-७००° श०

इस क्रममें रसायनिक संयुक्त जल बड़ी शीघ्रतासे विच्छेदित होना शुरू होता है और यदि भट्ठेका जलाना मन्द न हो तो बर्तनोंको नुकसान पहुँच सकता है। इस क्रमसे मिट्टी गैसोंको सोख सकती है और उन पर अम्लों की क्रियाएँ भी हो सकती है। मिट्टीमें यदि कार्बन अंथ्रे-साइटके रूपमें है तो वह बिना किसी हानिके ही जल्दी जलकर निकल जाती है, पर यदि कार्बन विटुमिनी कार्बनके

रूपमें है तो उसमें हाइड्रोकार्बन और कुछ तेल रहते हैं। जिससे स्थानीय दहन शुरू होता है और उससे मिट्टीका आक्सीकरण रुकता है। लिगनाइट कार्बनसे प्रचुर वाष्प निकलता है, पर यह इतना हानिकारक नहीं होता जितना विटुमिनी कार्बनसे निकले पदार्थ होते हैं। इस अवस्थामें यदि भट्ठेसे मिट्टी निकाल ली जाय तो वह भूरेसे काले रंग तक होती है। ऐसी मिट्टी फिर जलसे नम्र नहीं होती, पर इतनी सख्त और मजबूत भी नहीं होती कि टूटे नहीं।

आक्सीकरण-क्रम, ७००-१०००° श०

जब भट्ठेका तापक्रम ७००° श० पहुँच जाय तब उसे फिर तेज़ीसे जला सकते हैं, पर यह बर्तनोंकी प्रकृति, कद, घनता और बनावट पर निर्भर रहता है। इस दशामें कार्बन विच्छेदित होना शुरू होता है और फेरस आक्साइड और सल्फाइड फेरिक लवणोंमें विच्छेदित होते हैं। यदि आक्सीकरण ठीक तरहसे नहीं होता तो फेरस आक्साइड मिट्टीके सिलिकाके साथ संयुक्त हो जाता है। यदि तापक्रम पर्याप्त ऊँचा है तो धातु-मैल व स्पंजी बर्तन बनता है। पूर्ण आक्सीकरणके अभावमें बर्तनोंके अन्दर काले धब्बे पड़ जाते हैं। मिट्टीके विच्छेदक क्रिया-फल युक्त सिलिका, अलुमिना और अन्य आक्साइड हैं।

चीनी मिट्टीके वर्तन यदि ८००° श० पर भट्ठेसे निकाल लिये जाँय तो उनका रंग गुलाबी होता है। इस का कारण यह है कि मिट्टीसे लोहेके आक्साइड अलग हो जाते हैं। जैसे-जैसे तापक्रम बढ़ता जाता है, लोहा अलुमिना और सिलिकाके साथ संयुक्त हो रंगहीन होता जाता है। यदि मिट्टीमें कार्बन है, तो जब तक कार्बन दूर न हो जाय यह क्रिया नहीं होती। पकाये हुये बर्तनोंमें जो रंग होता है वह आक्सीकृत लोहेके कारण होता है।

संयोग-क्रम

ऐसा मालूम होता है कि ११००° श० के ठीक नीचे मुक्तसिलिकाका कुछ अंश अलुमिनाके साथ संयुक्त होकर एक यौगिक सिलिकेट बनता है जिसे "सिलिमेनाइट" कहते हैं। इसके बननेमें ताप निकलता है। लोहा और टाइटेनियम वाले द्रावकोंके होनेसे सिलिमेनाइटके बननेमें मदद मिलती है। अधिक समय तक १४००° श० पर गरम करनेसे अधिक तायदादमें सिलिमेनाइट बनता है। तापक्रमके और बढनेसे अनेक क्रियायें होती हुई मिट्टी सांद्र काँचमें पिघलनी शुरू होती है। यह पिघला हुआ ढेर अन्य अवयवोंको घुला लेता है। इस प्रकार रन्ध्रमय और अगालनीय ढेरमें ऐसा परिवर्तन होता है कि उसके

रंध्र बहुत कुछ काँच ऐसे पदार्थसे भर जाते हैं, और यदि पर्याप्त समय तक वे गरम होते रहें तो सम्भव है कि उनके रूप टेढ़े मेढ़े हो जाँय। इस कारण वर्तनोंका कितना कांचीकरण होना चाहिये यह उनकी प्रकृति पर निर्भर रहता है। अग्निजित् ईंटोंको कांचीकरणकी बिलकुल जरूरत नहीं होती, पर पोरसीलेन सामानोंको प्रायः पूर्ण रूपसे कांचीकरण होना जरूरी है। ईंटे भिन्न-भिन्न स्थानोंमें भिन्न-भिन्न तापक्रमों तक पकाई जाती हैं। अच्छी ईंटोंके लिये १० से १४ सेगरकोनका तापक्रम आवश्यक है।

———

नवां अध्याय

पोरसीलेन

सफ़ेद मिट्टीके उन बर्तनोंको 'पोरसीलेन' कहते हैं जिनमें जल प्रविष्ट नहीं कर सकता और जो पर्याप्त पतला होनेपर पारभासक होते हैं। जलका प्रविष्ट न होना इन्हें टेराकोटासे और पारभासकता इन्हे पत्थरके बर्तनोसे विभेद करता है। अच्छा पोरसीलेन पर्याप्त पतला होने पर ही पारभासक होता है, और मोटा होनेसे उसकी पारभासकता नष्ट हो जाती है। पोरसीलेन तीन प्रकारके होते है। (१) कठोर पोरसीलेन (२) कोमल पोरसीलेन और (३) बोना चीनी वा इङ्गलिश पोरसी-लेन।

कठोर पोरसीलेन पहले-पहल चीन देशमें बना था और वहाँसे ही यूरोप आया। इसपर लुक चढा होता है जो १२००-१६००° श० के बीच तापक्रम पर काँच सा बन जाता है। कोमल पोरसीलेन कठोर पोरसीलेनसे भिन्न होता है। काँच सा फ्रिटका बना होता है। ये निम्न तापक्रमपर पकाये जाते हैं और उनपर कोमल लुक फेरा होता है। ऐसा पोरसीलेन पहले-पहल चीनी पोरसीलेन की नकल करनेकी चेष्टामें फ्रांसमें बना था।

बोना चीनी वा इङ्गलिश पोरसीलेन इङ्गलैण्डमें बना था। यह बहुत निम्न तापक्रम पर ही पकाया जाता है। इसपर चित्रकारी सरलतासे हो जाती है। इसके 'बौडी' अधिक उच्च तापक्रम पर पकाये जाते हैं और लुक निम्न तापक्रमपर पकाया जाता है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें जली हुई हड्डी वा अस्थिभस्म रहता है।

पोरसीलेन सामान पहले निम्न तापक्रम पर पकाये जाते हैं। ऐसे पके हुये और विना लुक फेरे हुये सामानो को 'विस्कुट' कहते है। इन बिस्कुटों पर फिर लुक फेरे जाते हैं और तब पकाये जाते हैं। पोरसीलेन लुकके सगठन विस्कुटके सगठनके समान ही होते हैं। पोरसी-लेनके समान सफेद केओलीनके बने होते है। केओलीनके साथ फेलस्पार और स्फटिक मिला होना है। पोरसीलेनमें प्राय सफेद मिट्टी (केओलीन) ५० भाग, फेलस्पार २५ भाग और स्फटिक २५ भाग रहता है।

साधारण पोरसीलेन चार प्रकारके होते हैं। एक पोरसी-लेन में मिट्टीका अश बहुत अधिक और फेलस्पार और स्फटिक्का अंश कम होता है। इन्हें पिघलानेके लिये पर्याप्त कैलसियम कार्बोनेट डालते हैं। सेवर पोरसीलेन ऐसा पोरसीलेन है जिसमें सफेद मिट्टी ६६ भाग, स्फटिक १२ भाग, फेलस्पार १५ भाग और कैलसियम कार्बोनेट ७ भाग रहता है।

दूसरा पोरसीलेन वह होता है जिसमें फेलस्पारका अंश अधिक और कैलसियम कार्बोनेटका कम होता है। कार्लस्वाड पोरसीलेन ऐसा पोरसीलेन है। इसमें सफेद मिट्टी ५१'६ भाग, स्फटिक २४'५ भाग, फेलस्पार २१'६ भाग, कैलसियम कार्बोनेट १'६ भाग रहता है। तीसरे प्रकार का पोरसीलेन वह होता है जिसमें मिट्टीका अश कम, पर फेलस्पारका अंश बहुत अधिक होता है। ऐसा पोरसीलेन जापानी पोरसीलेन है जिसमें मिट्टी ३१ भाग, स्फटिक ४१ भाग और फेलस्पार २८ भाग है वा कोपेन देगन पोरसीलेन है जिसमें मिट्टी ४७ भाग, स्टटिक २० भाग और फेलस्पार ३३ भाग रहता है। चौथे प्रकारका पोरसीलेन वह है जिसमें मिट्टीका अंश बहुत अधिक, स्फटिकका अंश सामान्य और कुछ फेलस्पारके स्थानमें कैलसियम कार्बोनेट रहता है। ऐसा पोरसीलेन बर्लिन व बेलजियम पोरसीलेन है। बर्लिन पोरसीलेनमें मिट्टी ५३ भाग, स्फटिक २० भाग, फेलस्पार और चूना २७ भाग रहता है। बेलजियम पोरसीलेनमें मिट्टी ५८ भाग, स्फटिक २६ भाग और फेलस्पार और चूना १६ भाग रहता है।

कोमल पोरसीलेन प्रधानतः सौन्दर्यके सामानोंके लिये प्रयुक्त होता है। ऐसे पोरसीलेनमें मिट्टी २५, स्फटिक ४५ और फेलस्पार ३० भाग रहता है। कोमल

पोरसीलेनसे सौंदर्यके सामान बडे अच्छे बनते हैं। अपेक्षाकृत निम्न तापक्रमपर यह तैयार होता है।

पोरसीलेन तैयार करनेकी विधि यह है। केओलीनके सिवाय अन्य कच्चे सामानोको चकमक पत्थरके गोलेके साथ बडे वडे वेलनोमें रख कर खूब महीन पीसते हैं। प्रायः ४० घण्टेमें यह पीसना समाप्त होता है। इन्हें फिर चलनी मे छानकर प्रवल क्षुब्धक लगी हुई वडी टंकीमें ले जाते हैं। वहाँ उसमें केओलीन मिलाकर कई घटे तक पूर्ण रूपसे मिलाते है। इसे फिर इस टकीमें डालकर वैद्युत् चुम्बकमें लेजाकर फिर फिल्टर प्रेसमें कडे होनेके लिये छानते हैं। फिल्टर प्रेस एक ऐसा यन्त्र है जिसमें मिट्टीसे पानी निकलकर मिट्टी कडी हो जाती है। पहले काठके प्रेस इस्तेमाल होते थे, पर अब लोहेके प्रेस इस्तेमाल होते हैं। इन प्रेसोमें अनेक पट्ट होते हैं। दो पट्टोंके बीच खाली स्थान होता है। इनमें रुईके मजवूत गाढे कपडे रक्खे रहते हैं। प्रधानतासे मिट्टीकी लेई प्रविष्ट करती है। पानी छनकर नीचे गिरता है और मिट्टी दो पट्टोके बीच में चपातीके रूपमें रह जाती है। छन्नेके कपडेको समय-समय पर सावधानीसे धोते हैं, नही तो उसके छेद बन्द हो जाते हैं। इस प्रेससे निकलने पर चपाती कोमल लेई के रूपमें रहता है। इसे तव गूँधनेकी मशीनमें डालकर घूमती हुई चक्कियोंमें पूर्णरूपसे दवाते हैं ताकि वायुके

बुलबुले उससे निकल जायँ। यह गूँधना प्रायः ४५ मिनटों में समाप्त होता है। इससे मिट्टी बहुत अधिक नम्र हो जाती है। ऐसी मिट्टीसे तब सामानोको बनाते है। भिन्न-भिन्न प्रकारके पोरसीलेनके सामान कैसे बनते है इसका वर्णन इस छोटी सी पुस्तकमें नहीं हो सकता, क्योंकि भिन्न-भिन्न सामानोके लिये भिन्न-भिन्न विधियाँ प्रयुक्त होती हैं। इस मिट्टीसे फिर साँचोंको भर कर हाथसे दबाते है। इसे फिर गैलीपर चढाते है। साँचोमें फिर सूखनेके लिये छोड देते हैं। भारतमें वायुका तापक्रम बर्तनोके सुखानेके लिये पर्याप्त है। ठडे देशोंमें कृत्रिम तापकी आवश्यकता होती है। साधारणतया ४ से ७ दिनोंमें खोखले सामान सूख जाते हैं। ठोस सामानोके लिये १० से १५ दिन लग सकता है। बर्तन सूखा है वा नहीं, इसकी जाँच छूनेसे होती है। सूखा हुआ बर्तन छूनेसे ठंडा नहीं मालूम होता।

कठोर पोरसीलेनमें जो लुक प्रयुक्त होते है वे चूने वा अलकलीके अलुमिनो-सिलिकेट होते हैं। चूने वाले लुक अधिक पारदर्शक होते हैं। वे पोरसीलेनमें अधिक प्रविष्ट भी कर जाते है। एक अच्छे लुकका नुसख़ा यह है।

केओलीन	७ भाग
डोलोमाइट	८ ”

स्फटिक-रेत ४३ ”

फेलस्पार ४२ ”

इसमें प्रायः २० से ३० प्रतिशत टूटे और जले हुये पोरसीलेन मिलाये जा सकते हैं। यह लुक १२ से १४ कोन पर परिपक्व होता है। इन्हे प्रायः १०० घंटे तक पानीके साथ मिलाकर खूब महीन पीसते हैं। इन्हें फिर वैद्युत्-चुम्बकमें ले जाकर कुछ घटोंके लिये वहाँ छोड देते है। यदि रगीन लुक प्रयुक्त करना है तो ऐसा रंग चुनते हैं जो उच्च तापक्रमको सहन कर सके। साधारणतया इसके लिये आस्मानी, हरा, बादामी, काला और गुलाबी रंग प्रयुक्त हो सकता है। लुकके साथ प्रायः ८ प्रतिशत भाग पीत युरेनियम आक्साइडके मिलानेसे सुन्दर काला रंग प्राप्त होता है।

बर्तनोंपर हाथसे ही लुक फेरा जाता है। लुक फेरने से पहले बर्तनोंको धूलोंसे २ वा ३ वायु-मण्डलके दबाव की वायुसे साफ करते हैं। यदि धूल साफ न कर ली जाय तो लुक पर छेद बन जाते हैं। जिन भागो पर लुक नहीं फेरना होता उन पर पिघला हुआ मोम व चर्बी डाल देते हैं। छोटे-छोटे सूराखोंको रबड़की ठेपीसे बन्द कर लेते हैं। ऐसा न करनेसे लुक प्रविष्ट कर छेदोंको बन्द कर सकता है। छोटे-छोटे सामानोंके लिये पतले लुक और बड़े-बडे सामानोंके लिये गाढ़े लुक इस्तेमाल होते हैं।

बर्तनोंपर लुक चढ़ सके, इसके लिये ज़रूरी है कि पोरसीलेनके सामानोंको पहले निम्न तापक्रमपर पका लें। इससे उनके जल निकल जाते हैं। यह पकाना साधारणतया भट्ठीकी दूसरी मंजिल पर भट्ठोंके नष्ट तापसे होता है। मामूली तौरसे बर्तनोको लुकमें डुबाकर उन पर लुक फेरते हैं, पर कुछ विशेष दशाओंमें बर्तनों पर छिडक कर भी लुक फेरते हैं। पर ऐसा छिडका हुआ लुक पर्याप्त मोटा नहीं होता। इस कारण यह विधि केवल सौन्दर्यके सामानोके लिये ही प्रयुक्त होती है। लुक का द्रव न बहुत पतला और न बहुत गाढ़ा होना चाहिये। गाढ़ा होनेसे लुकमें दरारें फटनेकी सम्भावना रहती है।

ऐसे लुक फेरे हुये सामानोंको बड़ी सावधानीसे सैंगरमें ऐसे रखते हैं कि वे सैगरकी दीवालोंसे व एक दूसरेसे सटे न हो। जर्मनीमें एक विशेष स्तम्भ पर जिसे "बुमसेन" कहते हैं, सामानोंको रखते है। जिन सामानोसे पोरसीलेन बने होते हैं उन्हींसे बुमसेन भी बनता है। भिन्न-भिन्न प्रकार के सामानों को रखनेके लिये भिन्न-भिन्न उपाय प्रयुक्त होते हैं। भट्ठेके किस भागमें कौन सामान रखना चाहिये इसमें बडी सावधानी की ज़रूरत होती है ताकि उन सामानो के पकानेमें सहूलियत हो।

पोरसीलेनके सामानो को दो कक्ष वाले नीचेके बहाव-

वाले भट्ठेमें पकाना अच्छा होता है। पकानेके साधारण-तया तीन प्रधान क्रम होते हैं। पहले क्रममें तापक्रम प्रायः ६००° श० तक पहुँचता है। इसमें प्रायः ५ से ६ घंटा लगता है। इस क्रममें शोषित जल निकल जाता है। दूसरे क्रम में तापक्रम ६००° से ११००° श० वा उस तापक्रम पर पहुँच जाता है, जब लुक पिघलना शुरू होता है। इसमें प्रायः १० से १२ घंटा लगता है। इस क्रममें भट्ठीको धीरे धीरे जलाते हैं। इसमें रासायनिक सयुक्तजल निकलता है और इसके निकलनेमें समय लगता है। तीसरे क्रममें भट्ठी तेज़ जलती है। फेलस्पार इसमें पिघलना शुरू होता है और वह काँच सा द्रव बनता है। जैसे-जैसे तापक्रम बढता है वैसे-वैसे वह अधिकाधिक कोमल होता जाता है। ठंडे होने पर यह मणिभीय सिलबिमेनाइट बनता है। इस क्रममें तापक्रम प्रायः १४००° श० पर पहुँचता है। इसमें शुरूसे समय प्रायः २२ घंटा लगता है। इसके बाद भट्ठेको धीरे धीरे ठंडा करना चाहिये। जलावन बन्दकर देनेसे कमसे कम १० घंटेके बाद भट्ठेका दरवाजा खोलना चाहिये। दूसरे क्रमके अन्त तक भट्ठेका वातावरण आक्सीकारक रहना चाहिये ताकि बर्तनोंका कार्बन जलकर निकल जाय। उसके बाद वातावरण लघ्वीकारक रहना चाहिये ताकि फेरिक लोहा पीत रंग न उत्पन्न कर सके।

वर्तनोके पकानेपर निम्न दोष हो सकते है :—

१—लुक-तल पर बहुत महीन छेद बन सकते हैं।

२—बड़े-बडे चकत्ते बर्तन-तल पर पड सकते हैं।

३—लुक पर काले धब्बे पड सकते हैं।

४—बर्तन टेढे-मेढे हो सकते है।

५—गाँठो पर चिटक हो सकते हैं।

६—बालू व लोहे के धब्बे पड सकते हैं।

७—बर्तनो पर चिटक हो सकते हैं।

अनुभवसे ही इन दोषो के दूर करने के उपाय मालूम किये जा सकते हैं।

दसवां अध्याय

पत्थरके सामान

पत्थरके सामान अपारदर्शक होते हैं। जल और अन्य द्रव उनमें प्रविष्ट नही कर सकते। ये अधिकांश रंगीन मिट्टीके बने होते हैं, पर अब कुछ सफ़ेद मिट्टीके भी बनने लगे है। रगीन पत्थरके सामानोपर लुक नही फेरा जाता अथवा केवल नमकका लुक फेरा जाता है।

उच्च कोटिके पत्थरके सामानो और पोरसीलेनके बीच विभेद करना असम्भव नहीं तो बहुत कठिन ज़रूर है। उच्च कोटिके पत्थरके पतले सामानोंमें कुछ पारभासकता अवश्य होती है, पर मोटे पोरसीलेनमे पारभासकता बिलकुल नही होती। मिट्टीके सामानोसे भी पत्थरके सामानोका विभेद करना कठिन है क्योकि जलके प्रविष्ट न करनेसे विभेद नहीं कर सकते। लुक फेरनेसे पहले पत्थर के सामानोंसे भी जल प्रविष्ट कर सकता है। साधारणतया हम उन सामानोको पत्थरका सामान कहते है जो अपार-दर्शक होते है और जिनमें सुषिरता व द्रवके प्रविष्ट करनेका गुण प्रायः नहीं होता।

पत्थरके सामान साधारणतः दो विभागोमें विभक्त किये जा सकते हैं। उच्च कोटिके पत्थरके सामान, स्वास्थ्य-

सबन्धी चीज़ें, घरेलू वर्तन और अम्लावरोधक वर्तन हैं। ये सशोधित मिट्टीसे तैयार होते हैं। निम्न कोटिके पत्थर के सामान बिना शोधी हुई मिट्टीसे तैयार होते हैं। ऐसे सामान मोरीके नल, पानीके नल और भिन्न-भिन्न कामोंके लिये टाइल है।

स्वास्थ्यके सामान पहले हीन कोटिकी अग्नि जि मिट्टीके बनते थे और उनके रगको ढकनेके लिये सफेद आच्छादनसे आच्छादित कर देते थे, पर अब वे प्राय. ऐसी ही सामग्रियोसे बनते हैं जिनसे पोरसीलेन बनते हैं। ऐसे स्वास्थ्यके सामानोंके तैयार करनेमें जो सामग्री प्रयुक्त होती है, वह भिन्न-भिन्न स्थानोंमें भिन्न-भिन्न प्रकारकी होती है। पर उन सब सामग्रियोका उद्देश्य यही होता है कि ऐसी चीज़ें बने जो प्राय १३५०° श० पर सघन ढेरमें परिणत हो जायँ। उन पर ऐसा लुक फेरा जाता है। जो उन्हे काममें लानेके समय फटे नहीं, साधारणतया ऐसे सामानो में

मिट्टी	४० से ५५ भाग
स्फटिक	४२ से ५५ भाग
फेल्सपार	३ से १५ "

रहता है। उनके पकानेका तापक्रम ५ से १० कोन होता है।

इङ्गलैण्डमें बने सामानोंके संगठन निम्नलिखित होते हैं :—

	१	२	३
नम्र मिट्टी	४३	३०	१८
केओलीन	२४	२२	४३
जला हुआ स्फटिक	२३	३६	२४
कौर्निश पत्थर	१०	१२	१५

जर्मनीमें बने सामानोंके संगठन निम्नलिखित होते हैं :—

	१	२	३
नम्र मिट्टी	३६	२५	३०
केओलीन	३०	३१	४०
जला हुआ स्फटिक	२०	३६	१४
फेलस्पार	४	५	१४

इसके लिये लुकका निम्न लिखित नुसख़ा अच्छा है।

फेलस्पार	१६७·० भाग
बालू	१११·० "
संगमरमर	५०·० "
केओलीन	२५·८ "
विदेराइट	१६·७ "
मैगनीसाइट	८·४ "

पत्थरोंके सामान वैसे ही बनते हैं जैसे पोरसीलेनके। पर मोटे होनेके कारण उन्हें बहुत धीरे-धीरे सुखाते हैं ताकि उनमें दरारें न फट जायँ।

जर्मनीमें जो मिट्टी अम्लावरोधक-बर्तनोंके लिये प्रयुक्त होती है उसका सगठन निम्न लिखित होता है।

सिलिका	७०·१५ भाग
अलुमिना	२१·४३ "
फेरिक आक्साइड	० ७७ "
मैगनीसियम आक्साइड	०·३६ "
अलकली	२·६२ "
गरम करनेसे कमी	४ ६२ "

यह मिट्टी बडी नम्र होती है और उसके साथ कुछ और उपचारकी जरूरत नहीं होती। इन सब सामानोंसे पत्थरके बर्तन वैसे ही बनाये जाते है जैसे अन्य सामान बनाये जाते हैं। मिट्टीको सामान्य रीतिसे तैयार कर कुम्हारके चाक पर बर्तनोंको गढ़ते हैं। यदि कोई भाग अधिक पेचीदा हो तो उन्हें अलग बना कर उसमें जोड़ते हैं। यदि उनके आकारमें विशेष यथार्थताकी ज़रूरत हो तो अर्ध सूखी अवस्थामें उन्हें खराद पर चढ़ाकर यथार्थ आकारका बनाते हैं। अम्लावरोधक बर्तनोंमें हाथसे ही प्लास्टरके साँचेमें ढालते हैं। साधारणतया ऐसे साँचोंके दो भाग होते हैं। प्रत्येक भागमें मिट्टीके लोंदे रखकर हाथ

से पीटकर साँचेके आकारमें बनाते हैं। साँचेके दो भागों-को तब एक साथ बाँधकर मुलायम मिट्टीसे उन्हें जोड़ देते हैं। कुछ समयके लिये तब साँचेको रख छोड़ते हैं और तब उसे साँचेसे निकालकर इधर-उधरकी मिट्टीको निकाल कर बर्तनो में यदि कोई दोष हो तो उसे दूर कर लेते हैं।

बर्तनोको फिर धीरे-धीरे सुखाते हैं। जल्दी सुखाना ठीक नही होता। इन बर्तनोंको फिर सामान्य नीचेके बहावके भट्ठे में नमकका लुक फेर कर पकाते है। भट्ठोमें बर्तनोको ऐसे रखते हैं ताकि चूल्हेसे नमक भाप निकल कर बर्तनके प्रत्येक भागपर पहुँच सके। नमकके स्थानमें पिघलने वाला लुक भी प्रयुक्त होता है। पर नमक के लुक सस्ते और अधिक प्रभावोत्पादक होते है। सीसका लुक इनपर नही फेरना चाहिये, क्योंकि यह उनपर चिपकता नहीं और अम्लो से आक्रान्त भी होता है।

मोरीके नल गालनीय मिट्टीमें बालू और ग्रोग मिलाकर बनाये जाते हैं, अथवा हीन कोटिकी अग्निजित् मिट्टी से बनाये जाते है। इसके लिये मिट्टीको धोने व शोधित करनेकी ज़रूरत नही पड़ती। गड्ढेसे निकालकर सीधे इस्तेमाल करते हैं । दो भाग मिट्टीको तीन भाग महीन ग्रोग और बालूके साथ मिलाकर पीसते और पानी डालकर 'मिक्सर' में मिलाते हैं। इसे फिर ठंडे स्थानपर परिपक्व होनेके लिये कुछ दिनो तक छोड़ देते हैं। तब

उसे 'युगमिल' में डालकर इस्तेमाल करते हैं। मोरीके नल एक विशेष नल-प्रेसमें बनते हैं। प्रेसमें ऊर्ध्वाधार दबाये जाते हैं ताकि उनका आकार टेढ़ा मेढ़ा न हो जाय। जब नल पर्याप्त कठोर हो जाता है तब चलती चक्की पर ही उसके दूषित भागको हाथो से हटा लेते हैं। उसके तलको कुछ खुरेद भी लेते हैं ताकि गारा और सीमेंट उसपर चढ़ सके। इसे तब सुखानेके लिये भट्ठोंके छतपर छोड देते है। ३ से ५ दिनोंमें यह सूख जाता है। सूखने पर इन्हे नीचे बहाव के भट्ठेमें पकाते हैं।

ऐसे सामानों पर किस तापक्रम पर लुक फेरना चाहिये इसका ठीक-ठीक पता अभी नहीं लगा है। पर साधारण-तया ३ से ५ कोनका तापक्रम पर्याप्त है। नमक से लुक फेरनेके समय ३ से २४ हैं। नमककी मात्रा समयपर निर्भर करती है। नमककी क्रिया न केवल सामानों पर ही होती है, पर भट्ठेकी दीवालों पर भी होती है। इस कारण ऐसे भट्ठेके लिये अलुमिनाकी ईंटें जिनमें सिलिका न हो अच्छी होती हैं।

पत्थरके सामानोंके पकानेके ५ क्रम हैं। पहला क्रम सबसे कठिन और अधिक महत्वका है। यह क्रम प्रारम्भसे उस समय तक रहता है जब तक शोषित जल पूर्णरूपसे निकल न जाय। इस क्रममें तापक्रम १५०° श० तक पहुँचता है। बर्तनों की प्रकृतिके अनुसार २४से ८६ घण्टा

तक इस क्रममें लगता है। इस क्रममें यदि पानी जल्दी सूख जाय तो अनेक दोष, पपड़ी फटना, दाना निकल आना, मुँह पर फटना, इत्यादि इसमें आ जाते हैं।

दूसरा क्रम पानी निकल जाने से आक्सीकरण क्रिया तक रहता है। इस क्रममें तापक्रम १५०° से ४५०° श० तक पहुँचता है। इस क्रममें प्रायः २० से ३० घण्टे लगते हैं। तीसरा क्रम आक्सीकरण क्रियाका है। यह क्रम बड़े महत्वका है। यदि आक्सीकरण पूरा न हो तो नल अच्छे नहीं होते। उनके अन्दरका भाग स्पंजी और टेढ़ा हो जाता है। यह क्रम प्रायः ८० से ६० घण्टे तक रहता है। इस क्रममें तापक्रम प्रायः ८००° श० तक पहुँचता है। चौथे क्रममें सामानोंका कांचीकरण होता है। इसमें प्रायः ३६ घण्टा लगता है। तापक्रम ७००° से ११५०° श० होता है। इस क्रमका समय बहुत कुछ कोयलेकी प्रकृति, भट्ठेके बहाव और मिट्टीकी प्रकृति इत्यादि पर निर्भर करता है।

पाँचवाँ क्रम नमक चढ़ाने व नमक से लुक फेरनेका है। कांचीकरण प्रारम्भ होने के बाद जब सामान कुछ कठोर हो जाय तब उसपर नमक चढ़ाना चाहिये। इसके लिये चूल्हेको विशेष रूपसे तैयार करनेकी ज़रूरत होती है। चूल्हेके सूराखोंको बिलकुल साफ़ कर लेना चाहिये और तब आगमें कोयला डालकर उसे बिलकुल सुलगा।

देना चाहिये । जब आग बिलकुल तेज़ हो जाय तब उस-पर थोडा-थोडा नमक डालना चाहिये । अधिक नमकसे आगकी तेज़ी कम हो जाती है और नमक जलता नहीं है । १० मिनटके बाद फिर दुबारा नमक डालते है । उसके बाद कुछ और कोयला डालने व चूल्हे के दरवाजेको बन्द कर देते है । फिर तीसरी बार नमक डालकर जलाते है । बीच बीच में नलको निकाल कर देखते हैं कि कितना नमक चढ़ा है । प्रायः ६ बार नमकके डालनेसे पर्याप्त लुक चढ़ जाता है । पर कुछ सामानोंके लिये इससे अधिक बार नमक डालने की ज़रूरत होती है । कितना नमक इस्तेमाल होना चाहिये यह मिट्टीकी प्रकृति और भट्ठेकी बनावटपर निर्भर करता है । पर साधारण रूपसे प्रति टन नलमें प्राय. २० पौंड नमक और २५० पौंड अच्छा कोयला लगता है । नमक लगाने में साधारणतया ६ घण्टा लगता है । किसी-किसी दशामें २५ घण्टा तक लग सकता है ।

पत्थर के टाइल

पत्थरके टाइल सफ़ेद होते हैं और रगीन भी । सफ़ेद टाइल पत्थर और चकमक मिली हुई सफ़ेद मिट्टीसे बनते है । अन्य टाइल दुःगालनीय चीज़ोंसे मिली हुई मिट्टीसे बनते हैं । इन सामानोंको पहले 'एजरनर' मिलमें पीसते हैं और तब उनमें पानी और आवश्यक रग डालकर

'मिक्सर' में मिलाते हैं। तब उन्हें 'युगमिल' में रखकर उनसे टाइल तैयार करते हैं। यदि शुष्क विधिसे टाइल तैयार करना होता है तो उन्हें पीसकर २५ नं० की चलनीमें छान लेते हैं। पीसनेके पहले प्रायः ५ से ६ प्रति शत जल डाल लेते हैं, नहीं तो पीसनेपर जल मिलाना कठिन होता है। इस चूर्णको फिर टाइलके सॉचेमें रखकर दवाते हैं। एक बार दबानेसे ठीक दबता नहीं है। कुछ देर के बाद दूसरी बार अधिक बलसे दबाते हैं। इसके लिए अनेक प्रकारके प्रेस-स्पिंडल प्रेस, फ्रिक्शन स्पिंडल प्रेस और हाइड्रौलीक प्रेस काममें आते हैं। बड़े-बड़े कारखानोंके लिए ड्राइहाइड्रौलिक प्रेस और छोटे-छोटे कारखानोंके लिये 'फ्रिक्शन स्पिंडल प्रेस' अच्छा होता है। जर्मनीके मेसर्स डोर्स्ट ने एक प्रेस पेटेंट कराया है जिसमें घण्टेमें ६०० से ७०० तक प्रथम कोटिके टाइल केवल एक आदमीकी सहायतासे बन सकते हैं। इसमें बिजलीसे गरम करनेका प्रबन्ध है ताकि ठप्पोंमें मिट्टी सटे नहीं।

ऐसे टाइलोंको सुखानेकी जरूरत नहीं होती। ऐसे ही इन्हें भट्ठेमें पकाते हैं, पर पानी सूखनेके क्रममें अधिक समय, प्रायः १०० घण्टा, लगता है। ऐसे टाइलोंको पूर्ण रूपसे पकानेमें प्रायः २२० से २३० घण्टा लगता है।

ग्यारहवां अध्याय

मिट्टीके बर्तन

मिट्टीके बर्तन उन बर्तनोंको कहते हैं जो सरंध्र होते हैं और जिनपर लुक फिरा होता है। यह सफ़ेद व रंगीन मिट्टीके बनते हैं। जो सफेद मिट्टीके बनते हैं वे उत्कृष्ट कोटिके मिट्टीके बर्तन कहे जाते हैं और जो रंगीन मिट्टीके बनते हैं वे सामान्य मिट्टीके बर्तन कहे जाते है। इगलैंड में सफेद मिट्टीके बर्तन अच्छे, सस्ते और घरेलू कामोंके लिये उपयुक्त होते हैं। ऐसे बर्तन वहाँ चीनी मिट्टी, बौल मिट्टी, फ़्लिंट और कौर्निश पत्थरके बनते है। चीनी मिट्टीसे उनमें सफेदी आती है। बौल मिट्टीसे आवश्यक नम्रता आती है। इससे बर्तन शीघ्र बनते और सस्ते होते हैं। जले हुये फ़्लिंट से कठोरता और कुछ सफेदी भी आती है। कौर्निश पत्थर द्रावकका काम करता है।

उपर्युक्त पदार्थोंको अलग-अलग पीसकर फिर पानी डालकर पतली लेई सा बनाते हैं। इन लेइयोंको फिर टंकीमें रखकर मिलाते हैं। निम्नलिखित सामानोंसे मिट्टीके अच्छे बर्तन बन सकते हैं।

मिट्टी	५०	५०	५०	५३	५५
फ़्लिंट	३०	३२	३०	३४	३०
पत्थर	२०	—	—	—	—
फेलस्पार	—	१८	—	१०	१०
पेगमेटाइट	—	—	२०	—	—
सफेद खली	—	—	—	३	५

"जैस्पर" बर्तनमें बेरियम सलफेट रहता है। इसका निम्नलिखित नुसखा है।

चीनी मिट्टी	८	पौंड
वौल मिट्टी	$७\frac{१}{२}$	,,
फ़्लिट	३	,,
बेरियम सलफेट	$\frac{१}{१८}$	,,
कोबाल्ट आक्साइड	८	औंस

इनसे बर्तन बनानेके लिये इन्हें पहले पीसते, फिर पानी डालकर खूब मिलाते हैं, और तब छानकर वैद्युत्-चुम्बक में ले जाकर लोहेके टुकड़ोंको अलग कर लेते हैं। तब उसे 'फिल्टर प्रेस' में डालकर टिकिया बनाते हैं। फिर फिल्टर प्रेस से युगमिल में ले जाकर उससे चक्की पर वा जौलीपर बर्तन बनाते हैं।

यदि इससे टाइल बनाना होता है तो फ़िल्टर प्रेससे निकाल कर टिकियाको भट्ठेके नष्ट तापसे सुखा लेते हैं। इन सूखी टिकियोंको फिर 'पुजरनर' मिल में पीसकर

२० से ४० नम्बरकी चलनीमें छानकर टाइलके लिए तैयार रखते हैं। इसमें जलकी मात्रा ६ से ६ प्रति शत होनी चाहिये। इससे टाइल वैसे ही तैयार करते हैं जैसा गत अध्याय में वर्णन किया गया है।

इन सामानोको तैयार कर उन्हें साँचोमें ही सूखनेके लिये उच्छोपको (driers)में रखते हैं। इन्हें जलवाष्पसे ३०-४०° श० तापक्रम तक गरमकर सुखाते है। कभी-कभी बर्तन सूखने पर फट जाते हैं। फटनेके निम्नलिखित कारण हो सकते है।

१—बर्तनोके सगठनके दोषसे। यदि बर्तन ऐसे सामानोसे बने हैं जिनमें बाँध रखनेकी शक्ति कम है तो सूखनेपर मिट्टीके सिकुडनेके कारण उनपर तनाव होनेसे वे फट जाते हैं। नम्र मिट्टीमें अधिक पानीके होनेसे भी वे सूखने पर फट सकते हैं। यदि युगमिलमें मिट्टी ठीक तरहसे मिलाई न गयी हो तो विभिन्न भागोके असम सिकुडनसे बर्तन फट जाते हैं।

२—बर्तनके बनानेकी खराबीसे।

३—बर्तनके सुखानेकी खराबीसे।

जब बर्तन सूख जाते हैं तब उन्हे बालू-कागजसे पौलिश कर लेते है। पौलिशकर लेने पर उन्हे दोबारा पकाते है। पहली बार ११००° से १२००° तक पकाते हैं, दूसरी बार १०००° से ११००° श० तक पकाते हैं।

पकानेके लिये इन्हे सैगरोंमें रखते है। इन सैगरोंको एक कतारमें भट्ठेमें रखते है। मामूली भट्ठेमें ५ से ६ कतार अंटती है। उत्कृष्ट कोटिके मिट्टीके बर्तनोंके लिये नीचे बहावके भट्ठे हैं। जब बर्तन पक जाते हैं तब भट्ठे-से निकालकर अच्छे बर्तनोको छाँट लेते है। १० से १५ प्रति सैकड़े बर्तन इसमें खराब हो जाते हैं। निम्नलिखित कारणोंसे इनमें खराबियाँ होती है —

१—बनानेके समय यदि मिट्टियोंमें वायुके बुलबुले रह जाते हैं, तो पकानेके समय वे फूट निकलते है। पकाने से पहले बर्तनोंके पोलिश करने वा घुमानेसे ये बुलबुले निकल जाते हैं।

२—यदि सैगरोंमें बर्तन ठीक तरहसे न रखे जायँ वा जरूरतसे ज्यादा आँच लग गई हो तो बर्तन टेढ़े हो जाते हैं।

३—यदि बालूमें जिनपर रखकर सैगरोंमें ये पकाये जाते हैं, लोहेके टुकडे हों तो बर्तनोंपर धब्बे पड जाते हैं।

४—यदि बर्तन ठीक तरहसे रक्खे न हो वा भट्ठा जल्दीसे गरम हो जाय वा पकानेके समय अधिक ठढी वायु भट्ठेमें प्रविष्ट करे वा भट्ठे जल्दीसे ठडे हो जायँ तो बर्तन फट जाते हैं।

५—बर्तनोंका रंग बादामी हो जाता है।

६—बर्तनों पर मैल जम जाता है।

टाइलोंके प्रेससे सीधे भट्ठेमें रखते है। पहले भट्ठे का जलाना बहुत धीरे-धीरे होता है। १३० से १४० घंटोमे ये बिलकुल पक जाते है। भट्ठेका तापक्रम अन्तमें ११००° श० तक पहुँच जाता है। भट्ठेके ठंडा होनेमें प्रायः एक हफ्ता लगता है। जल्दी ठडा करनेसे उनके चिटक जानेका डर रहता है।

मिट्टीके वर्तनो पर बहुधा चित्रकारी करते है। इसके लिये आस्मानी व हरा रंग प्रयुक्त करते है, क्योंकि ये रंग उच्च तापक्रम पर नष्ट नही होते ।

आस्मानी रंगका नुसखा

कोबाल्ट आक्साइड	६० भाग
फ़्लिट	२० "
फेलस्पार	१० "
चीनी मिट्टी	१० "

हरा रंगका नुसखा

क्रोम आक्साइड	३२ भाग
कोबाल्ट आक्साइड	८ "
अलुमिना	२५ "
फेलस्पार	१५ "
फ़्लिट	१८ "
सफेदा	२ "

इनको मिलाकर ११००° श० पर जलाने और ऐसा

महीन पीसनेसे जिसमें ये २०० छेदवाली चलनीमें छन-जाय, ये रंग बनते हैं। इस्तेमाल करनेसे पहले इन्हें खूब घोलते हैं। यह रग बर्तनोंपर चिपक जाय, इसके लिये यह आवश्यक है कि इन रंगोको छापनेके तेलमें खूब मिला लिया जाय। इसके लिये छापनेका तेल इस प्रकार बनता है।

उत्कृष्ट अलसीका तेल	½ पिंट
गोंद मस्तगी	½ औंस
गोंद अम्बर	½ "
सफेदा	½ "

इन चीज़ोंको धीरे-धीरे उबालते हैं ताकि वे राव ऐसी गाढ़ी हो जायँ। इस तेलको वायुसे अलग रखते हैं। जितने दिन इन्हें रक्खें उतने ही अच्छे होते हैं।

रगोंको इस तेलके साथ मिलाकर तप्त पट्ट पर गरम कर पतला बना लेते हैं। तव इसे एक चिपटे चाकूसे ताँबेके चित्र खोदे पट्टपर फैला देते हैं। उस चाकूसे ही आवश्यकतासे अधिक तेलको हटा लेते हैं। फिर पट्टके तेल को मोटे गद्देसे साफ़ कर लेते हैं ताकि खुदे हुये चित्रोंमें ही रग रहे, पट्टपर नहीं। फिर एक महीन "टिशु कागज़" को लेकर कोमल साबुनके इमलशनसे ब्रुशसे पोंछ डालते हैं। फिर कागज़के साबुन वाले तलको चित्र वाले पट्ट पर सावधानीसे रखकर पट्टको ऊनी कपडेसे मढे हुए बेलन

से दबाते है। फिर पट्टको गरम करते है और कागज़को निकाल लेते हैं। अब इस कागज पर चित्र उठ जाता है। इस चित्रवाले कागज़के बर्तनोपर रख कर ऊनी कपडेके टुकडोंसे दबाकर फिर एक सख़्त ब्रुशसे दबाकर कुछ देरके लिये छोड देते है ताकि कागज़का रंग बर्तन पर शोषित हो जाय। तब बर्तन को पानीकी टंकीमें डुबाकर तब तक रखते है जब तक कागज़ बर्तनसे अलग होना शुरू न हो जाय। फिर स्पजसे कागज़को धीरे-धीरे हटा लेते है। अब बर्तनोको सुखाकर लुकमें डुबाते है। बडे बडे कारखानो में रोलर मशीनमें कागज़को छापते है। इस मशीनमें दो या तीन रंग एक साथ छापे जा सकते हैं।

इन बर्तनोपर जो लुक फेरे जाते है वे अलकली व सीसवाले लुक होते हैं। ये ऐसे होते हैं कि निम्न तापक्रम पर ही परिपक्व हो जाते है। चूना व मैगनीशियाके साथ मिले हुये अलकलीके लुक इसके लिये अच्छे होते है। कुछ पीलापन लिए हुये स्वच्छ पारदर्शक लुक

सफेदा	६७ ३ भाग
फ़्लिट	२० ६ ,,
चीनी मिट्टी	११.१ ,,

मिलानेसे प्राप्त होता है। यदि लुकको अपारदर्शक बनाना है तो उसमें कुछ ज़िंक आक्साइड और सफ़ेद खली मिला लेते हैं। मिट्टीके बर्तनों पर जो सीस वाले

लुक प्रयुक्त होते हैं वे दो विभिन्न फ्रिटों—सोहागा फ्रिट और सीस फ्रिट—के मिलानेसे बनते हैं।

सोहागा फ्रिटमें सोहागा १३३ ७ भाग, फ्लिट ८१ ६ भाग, फेलस्पार ५५ ६ भाग, सफेद खली ५५ ० भाग, और चीनी मिट्टी ४३·८ भाग रहता है।

सीस फ्रिटमें लालसीस २० २ भाग, फ्लिट ११·० भाग, फेलस्पार ५ ६ भाग रहता है।

विना सीस वाला लुक इस प्रकार प्राप्त होता है —

सफ़ेद खली ६·८ भाग, सोडियम कार्बोनेट (अनार्द्र) ६ २ भाग, सोडियम शोरा ४ ५ भाग, चीनी मिट्टी १५·७ भाग, फ्लिट ३७ २ भाग, और बोरिक अम्ल २३ ७ भाग। कभी कभी इसमें थोडा गोंद भी मिलाते है ताकि सूखने पर वह टाइल से चिपका रहे।

एक वार पकाने पर फिर वर्त्तनो पर चित्र उतारकर फिर लुक में डुबाते है। तब उसे सुखाकर सैगरो में बडी सावधानी से रखकर फिर दुवारा पकाते हैं।

उत्कृष्ट कोटिके मिट्टीके बत्तर्नोंको यदि पेंट करना होता है तो हाथोसे पेंट करते है। कभी कभी एकबार पका लेने पर ही पेंट करते हैं और कभी कभी दुवारा पकालेने पर भी पेंट करते है। पेंट करने के लिये विशेष प्रकारके रंग प्रयुक्त करते है।

बारहवां अध्याय

टेराकोटा

सामान्य मिट्टीकी चीजोंको जिनपर लुक फेरा हुआ नहीं होता टेराकोटा कहते हैं। टेरा कोटाके अन्दर सामान्य ईंटें, खपड़े (टाइल) और लाल मिट्टीके सामान्य बर्तन हैं।

ईंट और खपड़ो लिये मिट्टी ऐसी होनी चाहिये कि उनके कुछ अवयव अपेक्षाकृत निम्न तापक्रमपर पिघलें और अन्य अवयवों पर ताप का कोई विशेष असर न हो। इस दूसरे प्रकार के अवयव ही उनके आकार को कायम रखते हैं। ईंटोंके लिए मिट्टी नम्र होनी चाहिये। ऐसी मिट्टीमें चट्टानों वा स्फटिकके चूर्ण व रेतका होना आवश्यक है।

सामान्य मिट्टी पिघलनेवाली होती है और चट्टान व स्फटिकके चूर्ण व रेत कठिनता से पिघलनेवाले होते हैं। इससे इनके मिश्रण से जो ईंटे बनती हैं वे अच्छी होती हैं। ईंटों और खपड़ोंको भट्टियोंमें पकानेका उद्देश्य यही होता है कि उनपर जल और वायुका जहांतक हो कम प्रभाव पड़े। इस कामके लिये सुखाने वा पकानेपर मिट्टी में सिकुड़नेका गुण भी बहुत कम होना चाहिये। इस सिकुड़नेके गुणको कम करनेके लिये मिट्टीको तैयार करते हैं। इससे सूखनेपर सिकुड़न कम होती है पर पकानेपर

जो सिकुड़न होती है, वह इससे कम नहीं की जा सकती है ।

पकाने पर रंगका चढ़ना

मिट्टीमें जो चीज़ें रंग पैदा करती हैं वे प्रधानतः लोहे और मैंगनीज़के आक्साइड और चूना और मैगनीशियाके कार्बोनेट है । वेनेडियम व टाइटेनियम सदृश कुछ दुर्लभ-धातुओंके लवण भी रंग प्रदान करते हैं । ये रग कुछ तो मिट्टीकी भौतिक अवस्थाके कारण् और कुछ उनके रासायनिक सगठन और बनावटके कारण आते हैं। मिट्टीमें मैंगनीज़ डायक्साइड बहुत अल्प मात्रामें रहता है । इसकी कोई स्वतत्र क्रिया नही होती । यह केवल लोहेके आक्साइडके रगको कुछ परिवर्तित कर देता है। चूना, मैगनीशिया और अलुमिनाका अपना कोई रग नही होता पर ये लोहेके रगको बहुत कुछ सुधार करते हैं । यदि मिट्टीमें लोहेकी मात्रा बहुत कम है और अलुमिनाकी बहुत अधिक तो उच्च तापक्रमपर पकाने से मिट्टीका रग पीला व पीलापन लिये हुए बादामी रगका होता है । यदि अलुमिनाकी मात्रा बहुत कम और लोहेकी बहुत अधिक तो रंग पीलापन लिये हुये बादामीसे लेकर सुर्ख़ लिये हुये बादामी होता है । यदि मिट्टीमें लोहेके आक्साइडकी मात्रा ५ प्रतिशत है तो ऐसी मिट्टीके बरतन सुर्ख़ रगके

होते है । अधिक लोहेसे रंग और तेज़ हो जाता है । चूना और मैगनीशियासे लोहेका रंग उड जाता है । यदि लोहे के आक्साइडसे चूनेकी मात्रा दुगुनी है तो लोहेका लाल रंग बिलकुल लुप्त हो जाता और उसके स्थानमें पीलापन लिये हुए रंग चढ जाता है ।

भट्ठीके अन्दरके वातावरणका भी रंगपर असर पडता है । यदि अन्दर की वायु लघ्वीकारक है तो फेरिक लोहा फेरस लोहे वा धातुक लोहेमें परिणत हो बरतनका रंग भूरा वा काला बना देता है । यदि अन्दरकी वायु आक्सीकारक है तो फेरस लोहा पीले व सुर्ख़ आक्साइडमें परिणत हो जाता है । जलावनके गंधकका भी रंगपर बहुत कुछ असर पडता है । पकानेके तापक्रमका भी बर्तनके रंगोपर प्रभाव पडता है । लोहेके आक्साइडका रंग तापक्रमकी सतत वृद्धिसे धुंधला होता जाता है । पर यदि मिट्टीमें चूनेका अंश थोडा है तो तापक्रमकी वृद्धिसे रंग हलका होता है ।

ईंट ।

मकान बनानेके लिये ईंटोका व्यवहार बहुत पुराने ज़मानेसे होता चला आता है । भिन्न भिन्न देशों और भिन्न भिन्न समयोंमें ईंटें भिन्न भिन्न आकारोंकी बनती थीं । भारतकी प्राचीन ईंटें छोटी छोटी होती थीं

यूनानकी ईंटें बडी बडी होती थी। पर आजकल प्राय एक ही आकारकी ईंटें बनानेकी चेष्टायें हो रही है। ये ईंटे प्रायः ९ इंच लम्बी, साढे चार इंच चौडी और ३ ईंच मोटी होती है। इससे अधिक मोटी ईंटे जल्दी सूखती नहीं।

ईंटें बनानेकी प्राचीन विधि हाथोसे साचोमें ढालनेकी है। आजकल भी प्राय यही विधि बहुत अधिक अशमें इस्तेमाल होती है। जो मिट्टी ईंटोके बनानेमें प्रयुक्त होती है उसे तैयार करनेमें कोई विशेष आवश्यकता नहीं होती। सूखी मिट्टीमें केवल पानी डालकर उसे गूंधते है ताकि वह पर्याप्त नम्र हो जाय। ईंटोकी ढलाई लकडीके साचोमें होती है। साचेको पहले बलुआ लेते है फिर मिट्टीके लोदे-को काटकर बालूमें लपेट कर साचेमें रख अधिक मिट्टीको काठमें लगे तारसे काट लेते है। फिर ईंटोको साचोसे निकाल कर सुखानेके लिये छोड देते है। जब ईंटे सूख जाती हैं तब उन्हें भट्टोमें रखकर पकाते हैं। हाथसे बनानेकी यह विधि अवश्य ही बडी सरल और थोडी ईंटोके लिये सस्ती है।

मशीनोसे भी ईंटोंकी ढलाई होती है। इनमें एक विधि तारसे ईंटोंके काटनेकी विधि है। इस विधिमें यन्त्रोंसे ("मिक्सर" नामक मशीनसे) मिट्टीको नम्र बनाते है। फिर इस मिट्टीको "युगमिल" में डालते हैं। इस युगमिल में एक नल लगा हुआ होता है। इस नलका आकार

और मोटाई ईंटकी-सी होती है। इस युगमिलसे बाहर निकलती हुई मिट्टी एक तारसे इतने बड़े टुकडोमें काट ली जाती है जिनमें प्रत्येक टुकड़ेसे छः ईंटें बन सकें। इन टुकडोको फिर एक दूसरे तारसे ईंटोके आकारमें काट कर तख़्ते पर रखकर सुखानेके लिये रख छोडते हैं। यदि ईंटोंको सूखी या अधसुखी विधिसे तैयार करना होता है तब एक प्रबल "प्रेस" का काम पडता है। इस विधिमें मिट्टी चूर्ण रूपमें हरती है पर उसमें जलका पर्याप्त अंश रहना चाहिये ताकि दबाने पर वह सट कर टिकिया बन जाय। इस कामके लिये अनेक प्रकारके अनेक प्रेस साथ-साथ प्रयुक्त होते हैं क्योंकि प्रेससे दबाने पर वह कितना ही प्रबल क्यों न हो प्रर्याप्त कठोर ईंटे नही बन सकती। कई प्रेसोसे दबाने पर अन्दरकी वायु भी ठीक तरहसे निकल जाती है। यदि मिट्टी अर्धसूखी हुई है अर्थात् कठिनतासे नम्र है तो कम प्रबल प्रेससे ही ईंटें जल्दी बन सकती है। इस विधिसे ईंटें बनानेमें लाभ यह है कि पकानेके पहले ईंटोको सुखाना नही पडता और मिट्टीको तैयार करनेकी जरूरत नही होती।

सुखाना

आमतौरसे ईंटोके सुखानेमें काफी समय लगता है। हाथसे बनी ईंटोंमें २० से २५ प्रतिशत पानी रहता है।

अन्य तरीकोसे तैयार ईंटोंमे पानीका अंश ५से १५ प्रतिशत रहता है। जहाँ हाथसे ईंटें बनती हैं वे खुली हवामें सुखाई जाती हैं, साँचोंसे निकालकर रेत छिड़क कर ज़मीन पर सुखाई जाती हैं। जब वे पर्याप्त सख्त हो जाती हैं तब ढेरमें रख दी जाती हैं और कुछ और सूखने को छोड दी जाती हैं। जब वर्षाका डर हो तो चटाई इत्यादिसे ढक दी जाती है। भारत ऐसे देशमें जहाँ धूप काफ़ी तेज़ होती है, हवामें ही सुखाना सस्ता पडता है पर जहाँ धूप तेज नही होती वहाँ कृत्रिम रीतिसे ही ईंटो को सुखाना पड़ता है। इन्हें सुखानेके लिये भट्टोंके नष्ट ताप प्रयुक्त करते है। यह ताप विशेष घरोंमें वा छप्परोंमें ले जाया जाता है। यदि उसमें पंखे चलनेका प्रबन्ध हो तो ईंटे जल्दी सूखती हैं।

खपड़ा (टाइल)

मकानोंकी छतोंको ढँकनेके लिये खपडोंका व्यवहार बहुत प्राचीनकालसे होता चला आया है। पाश्चात्य देशों में जो खपड़े प्रयुक्त होते है वे रोमन छापके होते हैं। कुछ संशोधित रूपसे यही खपड़े भारतमें भी प्राचीनकाल से होते चले आये हैं। ऐसा मालूम होता है कि भारतसे यूनानियों ने सीखा। यूनानियोंसे रोम वालों ने सीखा। रोम वालोंसे अन्य यूरोपीय जातियों ने सीखा। जो

खपड़े अंग्रेजोंके द्वारा इंगलैण्ड और भारतमें भी प्रयुक्त होते हैं वे चिपटे १० से १५ इञ्च लम्बे और ५ से १० इञ्च चौडे होते है। अटकानेके लिये उनमें एक व दो कांटे लगे रहते हैं ताकि वे छतोंसे फिसल न जायं। फ्रांस और अन्य यूरोपीय देशोंमें जो खपड़े प्रयुक्त होते है उन्हें 'मारसेल' टाइल कहते है। उनमें मेडी और नाली ऐसी बनी होती हैं कि वे उनसे एक दूसरेको पकड रखती है।

भारतमें जो देशी खपडे प्रयुक्त होते हैं वे दो प्रकारके होते हैं। एक चिपटे होते हैं और दूसरे अर्धगोलाकार। ये खपड़े वहां ही बनते है जहां उपयुक्त मिट्टी पर्याप्त मात्रामे पायी जाती है। ये खपडे दो तरीकोसे बनाये जाते हैं। एक नम्र विधिसे और दूसरी अर्ध शुष्क विधिसे। इसके लिये मिट्टी वैसी ही तैयार की जाती है जैसी ईटोके निर्माण में। नम्र मिट्टी लकडी व धातुके सांचोमें डालकर हाथसे दबाई जाती है अथवा ईटोमें प्रयुक्त होनेवाली मशीनोसे बनाई जाती है। अर्ध शुष्क मिट्टीके लिये ढालवाँ लोहेके सांचे प्रयुक्त होते हैं क्योकि इन्हे अधिक दबानेकी ज़रूरत होती है। साचोंमें मिट्टी सट न जाय इससे सांचो-को तेलिया लेते हैं। अर्धशुष्क विधिसे तैयार खपडे अच्छे नहीं होते।

भारतमें जो देशी खपड़े बनते हैं वे आमतौरसे नम्र मिट्टीसे ही बनते हैं। चपटे खपड़े हाथसे दबाकर सांचोमें

बनते हैं । हाथसे ही मिट्टीके लोदे बनाये जाते है । सांचों-को बालूसे वलुआ लेते है। गोलाकार खपडे चाकपर बनते है। खोखले बेलनाकार बनाकर तारसे दो भागोमें काट दिये जाते है। दोनों भाग एक ओर गावदुम होते हैं ताकि वे एक दूसरेपर ठीक ठीक बैठ जाय और छत चुए नही। ये खपडेहल्के होते है। इससे वे बहुत मजबूत नही होते।

ये खपडे भट्टो (आवे) मे पकाये जाते जाते है। कुछ आर्द्रावस्थामें ही ये भट्टोमें रखे जाते है। बहुत सूख जानेपर भट्टोमें रखनेपर अधिक टूटते है। भट्टोको बहुत धीरे धीरे गरम करना चाहिये और बहुत धीरे धीरे ठढा भी करना चाहिये। जिस मिट्टीमें लोहेके आक्साइडका अश अधिक रहता है उससे काले वा आस्मानी रगके खपडे बनते हैं। ये सामान्य रीतिसे ही पकाये जाते है पर आखिरमें चूल्हेके मुंहपर काफी कोयला डाला जाता है और वायुका प्रवेश कम कर दिया जाता है ताकि भट्टेके अन्दर प्रबल लघ्वीकरण वातावरण बना रहे। इससे लोहे-के आक्साइड लघ्वीकृत हो सिलिकाके साथ सयुक्त हो काला वा आस्मानी रग बनता है।

सामान्य बर्तन

हॉडी, घडे, मरतबान, गुलदस्ते इत्यादि पकाने और द्रव रखनेके और अन्य घरेलू बर्तन सामान्य मिट्टीके

बर्तन है। ये सस्ते,हलके और सरंध्र होते हैं। ये सामान्य मिट्टीसे बनते है। यह मिट्टी बहुत नम्र और समावयव होनी चाहिये। ऐसी मिट्टीके बनाने के तरीके भी बड़े सरल है। मिट्टीमें पानी देकर पैरोसे कुचलते है और परिपक्क होनेके लिये कुछ दिनो तक छोड देते है। ये बर्तन सामान्य चाक पर बनाये जाते है। कुम्हार इन चाकोको कुछ समय चलाता और कुछ समय चाक पर बर्तन गढ़ता है। यदि उन्नत चाक प्रयुक्त हो तो बहुत कुछ उन्नत हो सकता है। उतने ही समयमें अधिक बर्तन बन सकते है। कुम्हारोंके द्वारा बर्तन पकानेके ढंग भी बडे भद्दे हैं। इन भट्ठोका तापक्रम पर्याप्त ऊंचा नहीं होता। इससे बर्तन बहुत टूटते भी है। थोड़ेसे संशोधनसे उनके आवेंसे उच्चकोटिके बर्तन बनाये जा सकते है।